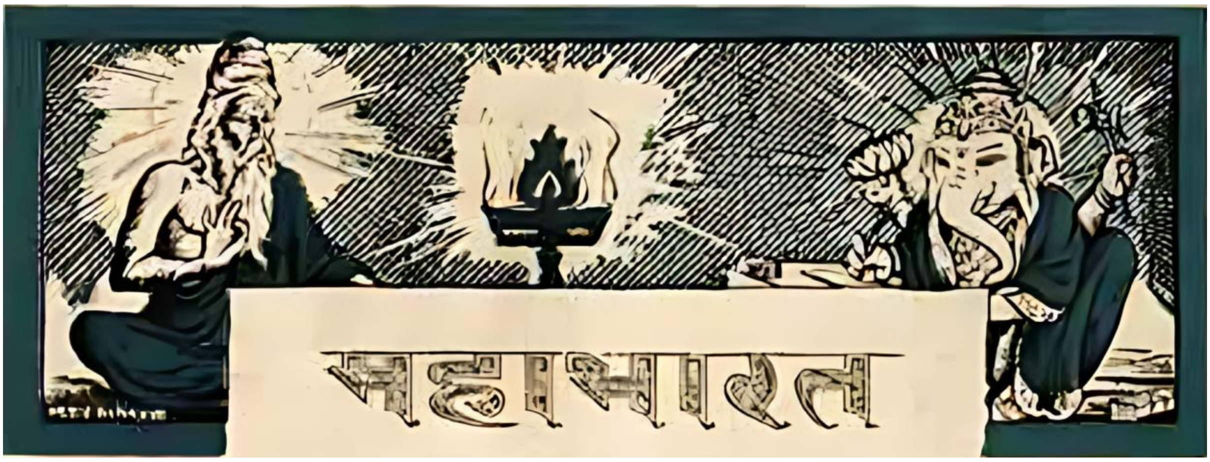
चन्दामामा

माँ - बच्चों का मासिक पत्र





भीष्म जब बाण शैय्या पर गिर गया तो पाण्डवों ने शंखनाद किया। जयजयकार किया। ग्यारह अक्षौहिणी सेना का नेता था भीष्म। दस दिन तक उसने पाण्डव योद्धाओं का सेना का संहार किया था। इसलिए पाण्डवों का उत्साह प्रदर्शित करना स्वाभाविक ही था।

उस दिन के लिए युद्ध समाप्त कर दिया गया। द्रोण का कौरव सेना से युद्ध समाप्त करने के लिए कहना था कि पाण्डव सेना ने भी युद्ध करना छोड़ दिया।

भीष्म के गिर जाने के बारे में द्रोण को बतानेवाला दुश्शासन था। यह सुनते ही द्रोण को काठ मार गया। वह रथ में गिर-सा गया।

फिर योद्धाओं ने अपने कवच उतार दिये। वे भागे मागे भीष्म के पास गये। उसको प्रणाम किया। उनमें कौरव थे और पाण्डव भी। भीष्म ने सब को सम्बोधित करते हुए कहा- "मेरा सिर गिर रहा है। सिर के नीचे कोई ऊँची चीज़ रखो।"

तुरन्त मुलायम तकियों को उसके सिर के नीचे रखने का प्रयत्न किया गया। यह देख भीष्म ने कहा-"जो वीर शैय्या पर पड़ा हुआ हो, उसके लिए ये तकिये ठीक नहीं हैं। अर्जुन! मेरेलिए उचित तकिये का प्रबन्ध करो।"

अर्जुन ने तीन बाण धनुष पर लगा कर इस तरह छोड़े कि वे भीष्म के लिए तकिये का काम दे सकें। उन पर भीष्म ने अपना सिर रख दिया।

भीष्म ने अर्जुन की प्रशंसा करते हुए कहा- "तुमने अपने पौरुष और पद के

अनुरूप तकिये का प्रबन्ध किया है। फिर उसने वहाँ उपस्थित लोगों से कहा-"मेरे चारों ओर एक खाई खोदो। मैं यहाँ उत्तरायण के आने तक अकेला अकेला सूर्य का ध्यान करूँगा। तुम इस बीच युद्ध छोड़ दो।"

इतने में वहाँ, उपकरण आदि लेकर वैद्य, भीष्म के शरीर में से बाण निकालने आये। यह देख भीष्म ने दुर्योधन से कहा-"बेटा, इन वैद्यों को पुरस्कार देकर भेज दो। बाणों के साथ ही मर जाना मेरा धर्म है।"

फिर पाण्डवों ने भीष्म की प्रदक्षिणा की। उसकी सुरक्षा का प्रबन्ध करके वे अपने शिविरों में चले गये। रात बीती। सवेरा हुआ। फिर कौरव और पाण्डव भीष्म को देखने आये। हज़ारों, वृद्धों और बच्चों ने आकर उसके दर्शन किये। उसपर उन्होंने पुष्प वर्षा की। फूल मालायें भी डालीं। नट और नर्तकों ने वाद्यों के साथ आकर उसका मनोरञ्जन किया।

परन्तु भीष्म को बहुत दर्द हो रहा था। उसने उस दर्द को छुपाते हुए कहा-"मुझे प्यास लग रही है।"



तुरन्त भोजन और पेय वगैरह लाये गये। परन्तु भीष्म ने कहा कि वे उसे नहीं चाहिए थे। उसने अर्जुन के बारे में पूछा।

अर्जुन ने उसके पास आकर नमस्कार किया। उसको नमस्कार करके पूछा-"क्या आज्ञा है?"

"बेटा, तुम्हारे बाणों के कारण सारा शरीर दुख रहा है। मुख सूख गया है। मेरे पीने का पानी तुम ही दे सकते हो।" भीष्म ने कहा।

अर्जुन ने बाण शैय्या की प्रदक्षिणा की। एक चमचमाते बाण को धनुष पर चढ़ाकर,



भीष्म के दायीं ओर उसने पृथ्वी में पर्जन्यास्त्र छोड़ा। बाण मूमि में घुस गया। इस कारण भूमि में जो छेद बना, उसमें से पानी निकलने लगा। उस पानी को पीकर भीष्म ने अपनी प्यास बुझाई। अर्जुन का यह कार्य सब को आश्चर्यजनक लगा।

भीष्म ने अर्जुन से कहा-"बेटा, इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। जो क्षत्रिय धर्म से परिचित हैं, वे तुम्हारी शक्ति से भी है। विदुर ने बहुत कहा पर दुर्योधन ने सुना नहीं।"

यह सुन दुर्योधन निरुत्साहित हो गया। भीष्म ने उससे कहा-"बेटा, विजय पाना सरल नहीं है। जब तक उसके साथ कृष्ण है, उससे युद्ध न करना, सन्धि कर लेना ही अच्छा है। यह देखो कि मेरे साथ इस युद्ध का भी अन्त हो। पाण्डवों से सन्धि करके उनको आधा राज्य दे दो। युधिष्ठिर को इन्द्रप्रस्थ दे दो। अगर अब भी तुमने मेरी बात न मानी तो तुम्हारी बदनामी होगी।" परन्तु दुर्योधन के सिर में बात न घुसी।

यह पता लगते ही कि भीष्म गिर गया है, कर्ण को थोड़ा डर लगा। वह जल्दी ही भीष्म के पास गया। आँखों में तरी थी उसके। भीष्म को नमस्कार करके कहा-"महानुभाव! वहकर्ण आया है, जिसने आपको गुस्सा दिलवाया था।"

भीष्म ने धीमे से आँखें खोलीं। कर्ण को देखा और आदरपूर्वक कहा-"बेटा कर्ण, तुम मेरे शत्रु नहीं हो। क्योंकि तुम व्यर्थ पाण्डवों को दूषित कर रहे थे, इसलिए तुम्हारा गर्व कम करने के लिए मैंने उस तरह बातचीत की थी। व्यास

और नारद ने मुझे बताया था कि तुम कुन्ती पुत्र हो। युद्ध में मैं क्या तुम्हारा पराक्रम नहीं जानता हूँ? मैं तुम्हारे शौर्य, दानशीलता और ब्राह्मण भक्ति के बारे में भी खूब जानता हूँ। तुम जैसा वीर नहीं है। तुम देवताओं के समान हो। अगर तुमने अपने भाई पाण्डवों से सन्धि कर ली तो मैं बहुत सन्तुष्ट होऊँगा। इस शत्रुता को मेरे साथ ही जाने दो। जो मृत्यु से बच गये हैं, उनको कम से कम सुख से रहने दो।"



यह सुन कर्ण ने कहा-"महानुभाव! मैं सब जानता हूँ। परन्तु मैंने दुर्योधन का नमक खाया है। मैं उसको निराश नहीं करूँगा। पाण्डव जैसे हर बात के लिए कृष्ण पर आश्रित हैं, वैसे ही दुर्योधन मुझ पर आश्रित हूँ। जन संहार होकर रहेगा इस तरह के कई अपशकुन दिखाई दे रहे हैं। अर्जुन से मुझे युद्ध करना ही होगा। युद्ध करने के लिए आप अनुमति दो। अगर इस निर्णय में कहीं कुछ अज्ञान हो, तो मुझे क्षमा करो।"

"हाँ, बेटा। युद्ध अपरिहार्य है। यह तो मुझे भी लग रहा है। अहङ्कार का परित्याग करके स्वर्ग के लिए युद्ध करो। अर्जुन से लड़कर बीर स्वर्ग पाओ। शान्ति के लिए जो कुछ मुझे करना था, वह मैंने कर दिया है। परन्तु मेरा प्रयत्न सफल नहीं हुआ।" भीष्म ने कहा।

जैसा उसने कहा था, युद्ध के लिए दोनों पक्ष सन्नद्ध होकर एकत्रित हुए। परन्तु भीष्म के गिर जाने के बाद कौरव सेना अनाथ सी हो गई। कौरव सेना एक ऐसे नेता की प्रतीक्षा करने लगी, जो उनको उचित मार्ग दिखा सके। कई ने कर्ण का नाम लिया। उनको भीष्म के



बाद कर्ण ही इस योग्य दिखाई दिया। कर्ण को तुरन्त बुलाया गया।

कर्ण भी रणभूमि प्रविष्ट होने के लिए उद्यत था। उसने प्रतिज्ञा की थी कि जबतक भीष्म युद्ध भूमि में रहेगा, तब तक वह अस्त्र ग्रहण न करेगा। उसने अपने सारथी से कहा-"भीष्म के गिर जाने के बाद कौरव सेना की बुरी हालत हो गई है। इसलिए मेरे कवच, शिरस्त्राण, धनुष, बाण व अन्य शस्त्र तैयार रखो।"

दिव्य रथ पर सवार होकर पताका फहराता हुआ, कर्ण पहली बार कुरुक्षेत्र में युद्ध के लिए आया। वह वहाँ उतरा, जहाँ भीष्म था। उसने उसके पराक्रम की प्रशंसा की। उसका आशीर्वाद माँगा। भीष्म ने भी कर्ण के पराक्रम की प्रशंसा की। उसको माशीर्वाद दिया।

फिर कर्ण ने भीष्म के चरण छुये। अपनी सेना के साथ वह कौरव सेना के पास गया। कर्ण को देखते ही कौरव सेना उत्साहपूर्वक गर्जन करने लगी। दुर्योधन ने भी कर्ण को देखकर आनन्दित हो कहा-"तुम्हारे आने से अनाथ सेना सनाथ हो गई है। अब हमें क्या करना है, यह बताओ।"

"क्यों कि सेनापति की नियुक्ति फिर आवश्यक थी इसलिए दुर्योधन ने कर्ण से इस विषय में सलाह माँगी।"

"राजा, हमारी सेना के योद्धा हर तरह से उत्तम है। पर सबको तो सेनापति बनाया नहीं जा सकता। ताकि औरों को ईर्ष्या न हो, इस लायक केवल द्रोणाचार्य अकेले ही हैं। वे ब्रह्मवेत्ता हैं। महान योद्धा हैं। यही नहीं, तुम्हें उन्होंने धनुर्विद्या सिखाई है। यदि उनको तुमने सर्व सेनापति नियुक्त किया तो मेरा विश्वास है

कि वे हमें उसी प्रकार विजय दिलवायेंगे जिस प्रकार देवताओं के सेनापति कुमारस्वामी ने दिलवाई थी।



दुर्योधन ने कर्ण का परामर्श स्वीकार किया। सेना के बीच में खड़े हुए द्रोण के पास जाकर कहा-"महात्मा! आयु और पराक्रम को दृष्टि में रखते हुए, आप ही ऐसे हैं, जो सेनाधिपति का यह पद ग्रहण कर सकते हैं। हम सब का नेतृत्व करके हमें विजय श्री दिलवाइये।"

यह सुनते ही कौरव सेना के राजाओं ने सिंहनाद किया।

द्रोण ने दुर्योधन के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए कहा-"राजन्, मेरे जिन गुणों की तुमने प्रशंसा की है, मैं उन सब का पूर्ण उपयोग करके पाण्डवों से युद्ध करके तुम सबको आनन्द दिलवाऊँगा। उन सबको मार दूँगा। पाण्डव मुझसे युद्ध नहीं कर सकते।"

तुरन्त दुर्योधन ने द्रोण को कौरव सेना का सेनापति नियुक्त किया। कौरव पक्ष के सब योद्धा इस समारोह में सम्मिलित हुए। सेना ने हर्षध्वनि की। उनके निनाद से आकाश गूँज उठा। ब्राह्मणों ने साधुवादों का उच्चारण किया। नर्तकों ने नृत्य किया। कौरव योद्धा इसप्रकार खुशियाँ मनाने लगे जैसे युद्ध ही जीत लिया हो।

उस समय, सेना के बीच खड़े होकर द्रोण ने दुर्योधन से कहा-"उस पद पर, जिस पर भीष्म थे, मुझे नियुक्त करके, तुमने मेरा आदर किया है। अतः यदि तुम मुझ से कोई वर चाहते हो तो बताओ।"

यह सुन दुर्योधन ने कहा-"मेरी एक ही इच्छा है। आप युधिष्ठिर को जीते जी पकड़कर मुझे सौंपिये।"

द्रोण ने आश्चर्य से पूछा-"यह क्या? यह न माँगकर कि युधिष्ठिर को मार दिया जाय, तुम यह क्यों चाहते हो कि मैं उसको जीवित पकड़ूँ!"

"आचार्य, यदि युधिष्ठिर मर गया तो मुझे क्या मिलेगा? अर्जुन, युद्ध भूमि में रह कर हम सबको मार सकता है न? युधिष्ठिर को जीते जी मेरे पास ले आये तो मैं फिर उसे जुये में हराऊँगा और तेरह वर्ष उनको वनों में भेजूँगा और तब बिना जनसंहार किये राज्य करूँगा।" दुर्योधन ने कहा।

दुर्योधन की चाल मालूम हो गई। द्रोण ने युक्तिपूर्वक कहा-"हाँ, यह सच तो है। मैं युधिष्ठिर को जीते जी पकड़वा दूँगा, बशर्ते कि अर्जुन उसकी रक्षा न करे। अब तक वह युधिष्ठिर की रक्षा करता रहेगा, तब तक उसको जीते जी पकड़ना असम्भव है। अगर तुमने दो घड़ी अर्जुन को युधिष्ठिर के पास न आने दिया तो मैं उसे पकड़कर अवश्य तुम्हें सौंप दूँगा।"

ताकि द्रोण अपना वचन निभाये, इसलिए दुर्योधन ने उसकी प्रतिज्ञा को सारी सेना के समक्ष घोषित किया। यह घोषणा पाण्डव सेना को सुनाई दी। युधिष्ठिर ने जबकि सब सुन रहे थे, अर्जुन से कहा-"द्रोण की प्रतिज्ञा सुन ली है न? युद्ध में तुम मेरे साथ ही रहो।"

"द्रोण के लिए मुझे जीतना जितना असम्भव है, उतना ही मेरा तुम्हें छोड़ना है। यदि मैं द्रोण से युद्ध नहीं कर सका, तो मैं प्राण छोड़ दूँगा। दुर्योधन इस जन्म में तुम्हें जीते जी नहीं पकड़ सकता। द्रोण अपनी प्रतिज्ञा नहीं पूरी कर सकता। मैं पूरी करने नहीं दूँगा। यही मेरी प्रतिज्ञा है।" अर्जुन ने कहा।





[५]

[उग्राक्ष ने चित्रसेन और उसके साथियों को दावत दी। उसी समय खबर मिली कि भयङ्कर पक्षियों पर सवार होकर अग्नि द्वीपवाले आये हैं। उग्राक्ष और चित्रसेन जङ्गल में गये। वहाँ अग्नि द्वीपवालों से जो युद्ध हुआ, उसमें कुछ राक्षस मारे गये। उग्राक्ष भी घायल हो गया। बाद में--]

उग्राक्ष अपने सेवकों के कन्धों पर हाथ डालकर, कराहता कराहता खड़ा हुआ। घावों के दर्द के कारण उसने कहा-"चित्रसेन, मैं और मेरी यह हालत! जहाँ तक नजर जाती है, वहाँ तक मेरा राज्य है। यही नहीं राक्षस जाति में मेरी बहुत प्रतिष्ठा है। मेरा वंश बड़ा उच्च है। परदेश से आये हुये लोगों से मुझ जैसे को ही मेरे जङ्गल में ही मार खानी पड़ी।" कहता कहता वह एक तरफ झुक गया।

चित्रसेन ने राक्षस को आश्वासन देते हुए कहा-"उग्राक्ष, शोक करने से कोई फायदा नहीं। हम और तुम्हारे राक्षस अग्निद्वीप से आये हुए लोगों से नहीं हराये गये हैं। हम हराये गये हैं उन भयङ्कर पक्षियों से, जिन पर ये सवार हो कर आये थे। हम उनको अपने पास के



हथियारों से नहीं हरा सकते। उनको मारने के लिए हमें कोई और उपाय सोचना होगा।

"इससे पहले कि हम जान सकेंगे कि उपाय क्या है, ये दुष्ट हमें मार देंगे। तुम्हारा राजमहल, मेरा किला और यह जङ्गल का राज्य ... यह सब ये द्वीपवाले हथिया लेंगे।" उग्राक्ष ने निराश होकर कहा।

उस भयङ्कर, बलवान राक्षस को यों मामूली आदमी की तरह घबराता देख चित्रसेन को बहुत दया आई।

"उग्राक्ष! क्या तुम्हें यह सन्देह हो रहा है कि अग्नि द्वीपवासी हमारे राज्य पर आक्रमण करने का प्रयत्न कर रहे हैं?" चित्रसेन ने पूछा।

"नहीं तो ये हमले किसलिए किये जा रहे हैं?" उग्राक्ष ने पूछा।

"यही मैं नहीं समझ पा रहा हूँ। मैं यह नहीं सोचता कि वे केवल इक्के दुक्के को हमारे गाँवों से उठा ले जाने के लिए आ रहे हैं।" चित्रसेन ने कहा।

"अगर उन दुष्टों में कोई एक और जीता जी पकड़ा गया तो उनका भेद मालूम हो जायेगा। जो मिला भी, वह बिना कुछ बताये मर भी गया।" उग्राक्ष ने दान्त कटकटाते हुए कहा।

"कभी न कभी उन दुष्टों में से हमें कोई न कोई तो मिलेगा ही। अगर कोई मिलेगा, तो उसकी बोटी बोटी काटकर ही सही हम इन लोगों का रहस्य मालूम कर लेंगे। मगर यह अग्निद्वीप है कहाँ? ये भयङ्कर पक्षी उनके हाथ कैसे लगे? उन पर सवार हो कर हमारे राज्य में आकर हमारे लोगों को उठाकर ले जाने में उनका इरादा क्या है? यह सब पहले हमें

मालूम करना होगा। खैर! अब मुझे जाना होगा। घाव भरने तक आराम करो। किले की रक्षा के लिए थोड़ा और सावधान होना ठीक है। मैं भी चौकन्ना रहूँगा।" चित्रसेन ने कहा। वह अपने अनुचरों को लेकर निकला।



"चित्रसेन! किसी और से न कहना कि मेरी स्थिति इतनी खराब है। तुम्हारे लोगों की नजर में मैं आदमी भी न समझा जाऊँगा।" उग्राक्ष ने पीछे से जोर से पुकारकर कहा।

उग्राक्ष की बात सुनकर चित्रसेन को हँसी आई। उसके पीछे आते हुए सेनापति 'महाराज' कहता सामने आया। "क्या बात है सेनापति?" चित्रसेन ने पूछा।

"इन द्वीप वासियों का मुकाबला करने के लिए यदि हमारे साथ उग्राक्ष के भी सेवक हों, तो अच्छा होगा। न मालूम वे कब बड़ी सेना लेकर हम पर हमला करें।" सेनापति ने कहा।

सेनापति की बात सुनकर चित्रसेन को गुस्सा आ गया। परन्तु उसने उसको बाहर व्यक्त नहीं होने दिया। "क्या तुम्हारा यह ख्याल है कि हम अपने नगर की रक्षा के लिए इन राक्षसों की मदद लें? यह कभी न होगा। जिस दिन में अपने नगर और महल ही रक्षा न कर पाऊँगा और राक्षसों की मदद के लिए जाऊँगा, उस दिन में राज्य ही छोड़ दूँगा।" चित्रसेन ने कहा।

यह जवाब सुनकर सेनापति के मुख से कोई बात न निकली।

चित्रसेन और उसके नौकर चाकर जङ्गल में कुछ दूर गये थे कि यकायक उनको शोर सुनाई दिया। चित्रसेन ने



अचरज करते हुए पीछे मुड़कर देखा। अजीब दथियार हाथ में लेकर दो राक्षस तेजी से भागे आ रहे थे। "राजा, राजा, ठहरो।" वे चिल्ला रहे थे। चित्रसेन रुका। सेनापति ने डरते हुए उससे पूछा-"कहीं से इन अग्नि द्वीपवालों ने फिर आक्रमण तो नहीं कर दिया है?"

चित्रसेन ने पूर्व की ओर मुड़कर कहा-"सूर्योदय होने वाला है। दिन में वे अभी तक किसी को नहीं दिखाई दिये हैं।" इतने में राक्षस हाँफते हाँफते पास आये। "राजा! उग्राक्ष ने, जैसे भी हो, आपको तुरन्त आने के लिए कहा है। कुम्भी कुप्प के पास है।" उन्होंने कहा।

"इतना जरूरी काम भी क्या है?" चित्रसेन ने पूछा।

"उनमें से एक आदमी मिल गया है, जो भयङ्कर पक्षियों पर सवार होकर आते हैं। इसलिए हमारे सरदार ने आपको बुलाकर लाने के लिए कहा है।" राक्षसों ने कहा।

"सिर्फ इस के लिए ही छाती पीट पीटकर भागकर आने ही क्या जरूरत थी? जो मिला है, वह कहाँ चला जायेगा?" चित्रसेन राक्षसों के साथ चल पड़ा।

"राजा, वह पेड़ से उतर नहीं रहा है। जब तक आप नहीं आयेंगे, हमारा काम ठीक न होगा। यह हमारे सरदार ने

कहा है।" राक्षस ने कहा। चित्रसेन ने सोचा कि ये दोनों राक्षस कुछ पी पाकर नशे में हैं। क्योंकि अगर एक बार दुश्मन हाथ में आ जाये, तो पेड़ से उतरना या न उतरना, उसकी मर्जी पर नहीं है।

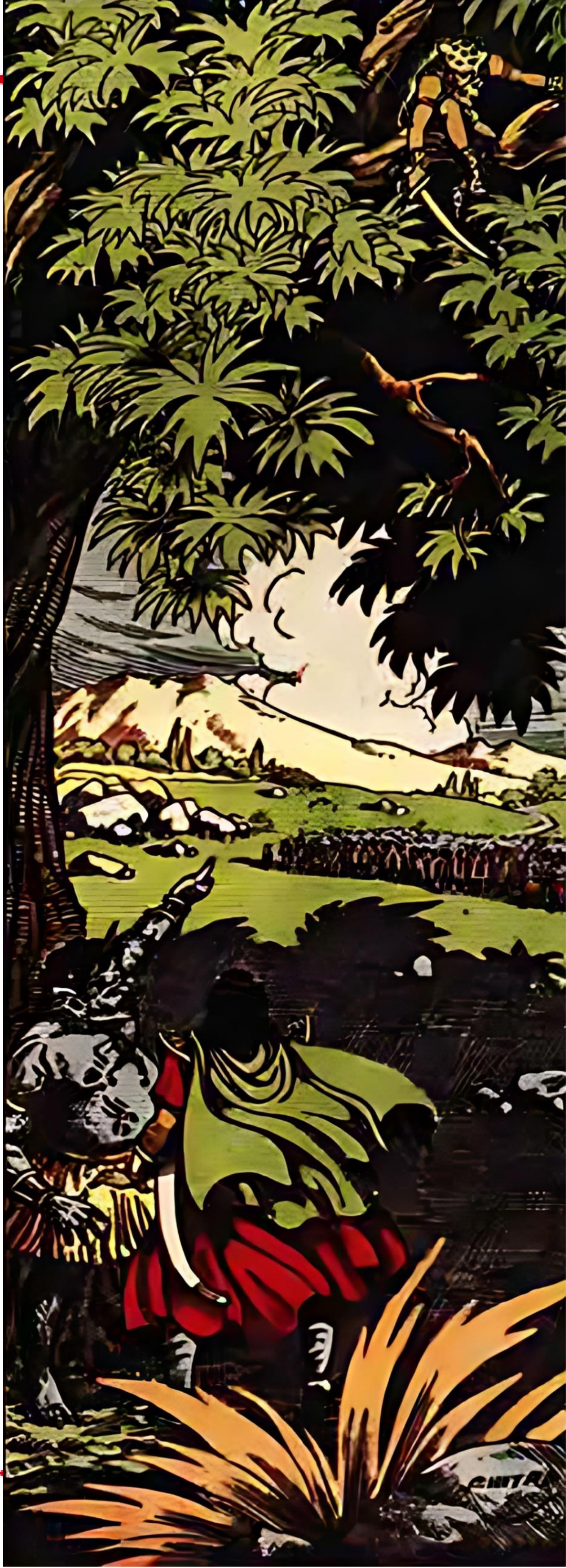
आधे घण्टे बाद, जब चित्रसेन अपने साथियों के साथ कुम्भी कुप्प के पास पहुँचा

तो देखा कि बस्ती से बाहर एक बड़े पेड़ के चारों ओर कुछ राक्षस और नगरवासी खड़े थे। उन सब के बीच में उग्राक्ष खड़ा था।

सब की नजर उस पेड़ पर थी। शेर के चर्म के कपड़े पहनकर एक व्यक्ति टहनी पर चढ़ा तलवार घुमाता चिल्ला रहा था।

"मैं नहीं आऊँगा। नहीं उतरूँगा। मैं जान बूझकर तुम राक्षसों का भोजन भला क्यों होऊँगा? अगर कोई पेड़ पर आया तो उसे तलवार से मार दूँगा और अपने को भी मार दूँगा।" वह कह रहा था। चित्रसेन ने उग्राक्ष से पूछा-"यह सब गड़बड़ी क्या है?"

उग्राक्ष ने यह प्रश्न सुनते ही पूछा- "चित्रसेन, तो, तुम आ गये! देखो, उस पेड़ पर है अग्निद्वीप से आया हुआ दुष्ट। रात जो यहाँ युद्ध हुआ था उसमें यह पीछे रह गया था। इसलिए हमें मिल गया। लगता है हम उसे जिन्दा न पकड़ पायेंगे। हम इससे बहुत कुछ मालूम कर सकते हैं। उसे डर लग रहा है कि हम उसे भून कर खा लेंगे। तुम उसे आश्वासन दो और जैसे भी हो नीचे उतरने के लिए कहो।"





चित्रसेन ने टहनी पर दृष्टि दौड़ाई। "तुम बिल्कुल न डरो। तुम्हें कोई नहीं मारेगा। तुम पेड़ पर से उतर आओ।"

"जब इतने कह रहे हैं, तब नहीं उत्तर रहा हूँ, तुम कौन होते हो? क्या तुम महाराजा हो?" शेर के चमड़े पहने हुए व्यक्ति ने खिझ कर कहा।

"हाँ, में महाराजा हूँ। यह जङ्गल इसमें स्थित गाँव, नगर, सब मेरे आधीन हैं। मैं तुम्हें आश्वासन देता हूँ कि तुम्हें कोई कुछ नहीं करेगा।" चित्रसेन ने कहा।

चित्रसेन के यह कहते ही वहाँ एकत्रित लोग जयजयकार करने लगे-"महाराजा की जय।"

यह जय जयकार सुनते ही टहनी पर चढ़े उस आदमी ने चित्रसेन की ओर देखकर पूछा-"तो ये राक्षस कौन हैं? अगर वे मेरे हाथ पैर काट काटकर खा गये तो?"

"वे तुम्हारा कुछ न बिगाड़ेंगे। वे मेरी आज्ञा पर ही चलनेवाले हैं।" कहते हुए चित्रसेन ने उग्राक्ष की ओर सिर फेरा। उग्राक्ष ने अपने सेवकों की ओर बड़ी ओखें करके देखा। तुरन्त वे भी नारे लगाने लगे-"चित्रसेन महाराजा की जय" उग्राक्ष ने भी चित्रसेन के सामने प्रणाम किया। फिर धीमे धीमे गुनगुनाया-"इस महाराक्षस की क्या गति हुई है!"

"महाराज! क्योंकि आपने आश्वासन दिया है, इसलिए मैं पेड़ पर से उतर रहा हूँ।" कहकर यह शेर के चमड़ेवाला झट उतरने लगा।

"तुम्हें कोई डर नहीं है, तुम उस तलवार को सेनापति को दे दो।" शेर का चमड़ा पहने हुए व्यक्ति ने बिना कुछ कहे अपनी तलवार सेनापति को सौंप दी।

"चित्रसेन, क्या तुम सोच रहे हो, कि इसको चक्की में बाँधे बिना ही तुम इससे भेद मालूम कर लोगे?" उग्राक्ष ने पूछा।

"हाँ, जो कुछ मुझे मालूम है, मैं वह सब बता दूँगा। इसलिए ही में पेड़ पर चढ़ बैठा था। उन्होंने कहा कि हम सब दोस्त है। पर जब आफत आई, तो मुझे अकेला छोड़कर वे पक्षियों पर सवार होकर भाग गये। वे अब तक पूर्व समुद्र के अग्नि द्वीप में पहुँच भी गये होंगे।" शेर का चमड़ा पहने हुए व्यक्ति ने कहा।

"क्या तुम उस द्वीप के नहीं हो?" चित्रसेन ने आश्चर्य से पूछा।

"अगर उस द्वीप का होता तो क्या जीते जी तुम्हारे हाथ आता? उन द्वीपवालों की सहायता करनेवाले कपिलपुर के राजा नागवर्मा की सेना का मैं एक सैनिक हूँ। मेरा नाम अमरपाल है।" उसने कहा।

नागवर्मा का नाम सुनते ही उग्राक्ष घबरा गया। "नागवर्मा, जो सेनापति था, राजा कैसे हो गया? राजा बीरसिंह का क्या हुआ?" उसने पूछा।



वीरसिंह महाराजा अग्निद्वीप में शायद बन्दी हैं। उसके राज्य का तो खैर अपहरण किया ही; अब वह उसकी लड़की कान्तमति से जबर्दस्ती विवाद करने का प्रयत्न कर रहा है। यही नहीं, बलवान अग्निद्वीप वासियों की मदद से आस-पास के प्रान्तों पर आक्रमण करके सम्राट होने की सोच रहा है।" अमरपाल ने कहा।

चित्रसेन को समीपवर्ती राज्यों के बारे में कोई जानकारी न थी। अमरपाल के कथनानुसार उसके राज्य की सीमा के एक राजा ने अग्नि वासियों से स्नेह कर लिया था। क्या अमरपाल का कहना सच है? या इसमें भी कोई धोखा है?"

चित्रसेन यों सोच रहा था कि दूर से घोड़ों के आने की आहट सुनाई दी। देखते-देखते उसका मन्त्री और चार सैनिक वहाँ आये। "महाराज! धवलगिरि से आपके पिताजी ने खबर भेजी है। नागवर्मा नाम के एक राजद्रोही ने अपनी सेना के साथ धवलगिरि पर धावा बोल दिया है। वे आपकी सैनिक सहायता तुरन्त चाहते हैं।"

चित्रसेन ने अपने सेनापति की ओर मुड़कर कहा-"सेनापति, तुम अपनी आधी सेना लेकर धवलगिरि जाओ। यहाँ की रक्षा का भार मैं अपने ऊपर लेता हूँ।"

"अच्छा, महाराज!" कहकर सेनापति वहाँ से निकल पड़ा।

"इस नागवर्मा के साथ अग्नि द्वीप के वे लोग तो नहीं हैं, जो भयङ्कर पक्षियों पर चढ़कर आते हैं?" उग्राक्ष ने अमरपाल से पूछा।

अमरपाल ने इस तरह चारों ओर देखा, जैसे कोई जबाब देने जा रहा हो। फिर कुछ सोचकर, चुपचाप उसने आकाश की ओर मुख किया।

(अभी है)



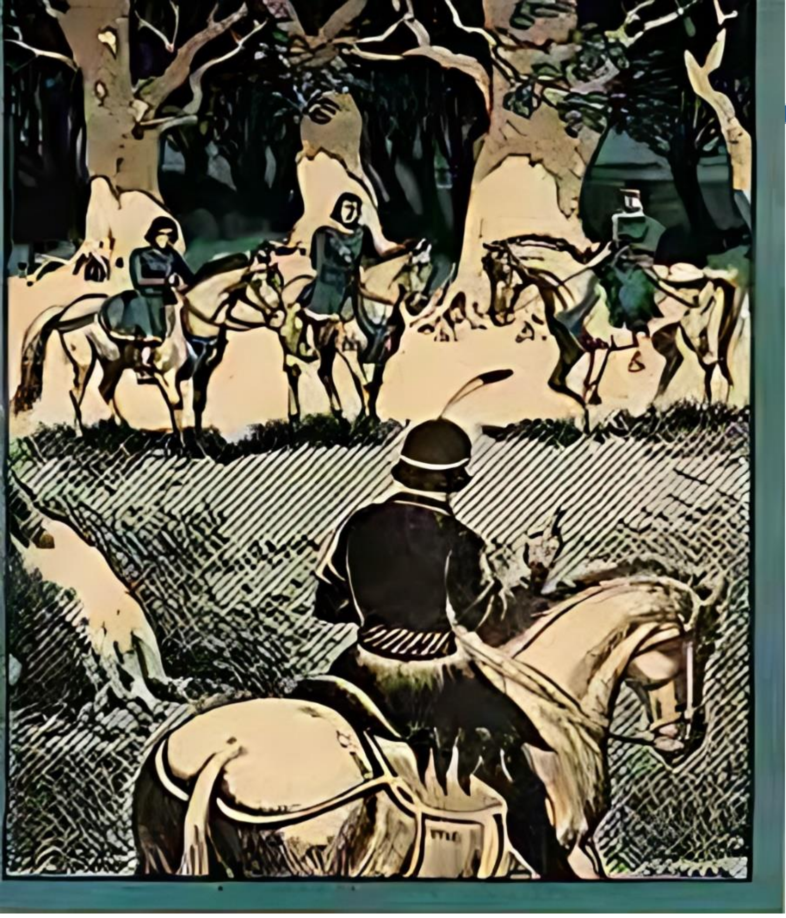


विदर्भ देश के राजा के तीन लड़के थे। जब उसकी पत्नी मर गई तो उसने दूसरी शादी कर ली। यह सोच कर कि उसकी दूसरी पत्नी, बच्चों की अच्छी तरह देखभाल न करेगी, उसने अपने तीनों लड़कों के लिए एक अलग महल बनवाया। उसमें उनकी सुविधा के लिये हर चीज़ की व्यवस्था की। उसमें उनको रखा।

कुछ दिनों बाद दूसरी पत्नी के भी एक लड़का हुआ। उसे डर था कि जब तक राजा का बड़ा लड़का जीवित था, तब तक उसके लड़के को राज्य न मिलेगा। उसने अपने मन की बात मन्थरा जैसी एक दासी से कही।

"अगर आप अपने सौतेले लड़कों से छुटकारा पाना चाहती हैं ती एक ही उपाय है। उनको शतरञ्ज के खेल के लिए बुलाइये और उनको हराइये। मेरे पास ऐसा पासा है, जिससे किसी को भी हराया जा सकता है। शर्त लगाइये कि जो कोई हारे वह जीतनेवाला जो कुछ माँगे, वह दे। हारने वाले से कहना कि वह ऋतुपर्ण के अद्‌भुत घोड़ों को लाकर दे। ऋतुपर्ण के पास तीन अद्‌भुत घोड़े हैं। वह उन्हे किसी को नहीं देता, अगर कोई उन्हे चोरी करने का यत्न करता भी है, तो वह जीते जी बाहर नहीं आ पाता।" दासी ने रानी को यह सलाह दी।

रानी ने एक त्यौहार के दिन दावत दी। दावत के लिए अपने तीनों सौतेले लड़कों को बुलाया। उसने उन तीनों को शतरञ्ज में हरा दिया। उन्होंने उससे पूछा-"हमें तुमने हरा दिया है। बताओ तुम्हारी क्या इच्छा है?"



"मेरी और कोई इच्छा नहीं है। ऋतुपर्ण के तीनों घोड़े ले आओ। उनको बिना लाये, वापिस न आओ।" रानी ने कहा।

उसी दिन, तीनों अपने अपने घोड़ों पर सवार होकर ऋतुपर्ण के राज्य की ओर निकले। जाते जाते ऋतुपर्ण का राज्य आया। राज्य के बाहर, काले कपड़े पहने, उन्हें एक व्यक्ति दिखाई दिया। "तुम कौन हो? कहाँ से आ रहे हो? किस काम पर आ रहे हो?" उसने राजकुमारों से पूछा।

"हम विदर्भ राजा के लड़के हैं। ऋतुपर्ण के अद्‌भुत घोड़ों को लाने के लिए जा रहे हैं।" राजकुमारों ने कहा।

"अच्छा हुआ कि मैं आपको मिल गया। ऋतुपर्ण के अद्‌भुत घोड़ों को लाना क्या कोई आसान काम है! उनको लेने जितने लोग आये, वे सब मारे गये। मैं इस ईलाके का जाना पहचाना काला चोर हूँ। राजा के घोड़ों को चुराने के लिए जो कुछ मुझ से बन सकेगा, मैं करूँगा। मेरे साथ आओ।" काले चोर ने कहा।

तभी अन्धेरा हो रहा था। आधी रात के समय काला चोर राजकुमारों को गुप्त मार्ग से, राजा के किले में ले गया। सौभाग्यवश सब पहरेदार सो रहे थे। काला चोर राजकुमारों को उस अस्तबल में ले गया, जहाँ विचित्र घोड़े बाँधे जाते थे। राजकुमारों ने ज्योंहि घोड़ों के पैरों की रस्सियाँ खोलीं, तो वे हिनहिनाये। उनका हिनहिनाना सुन, चारों ओर से पहरेदार भागे भागे आये और उन्होंने काले चोर और राजकुमारों को पकड़ लिया।

विचित्र घोड़ों को चुरानेवालों को डुबोने के लिए, राजा ने एक बड़ी कढ़ाई में तेल गरम

करवाया। राजा बड़ी कढ़ाई के पास बैठा था। उसने अपराधियों को बुलवाया। सैनिक काले चोर और राजकुमारों को लाये। राजा ने काले चोर के कपड़े देखकर पूछा-"तुम तो काले चोर के बिल्कुल नकल से लगते हो।"

"मैं नकल नहीं हूँ। मैं ही काला चोर हूँ।"

"अच्छा, तो देखो कि मैं चोरों को क्या सजा देता हूँ। ये तीनों कौन हैं?" ऋतुपर्ण महाराजा ने पूछा।

"ये विदर्भ देश के राजकुमार हैं।" काले चोर ने कहा।

"जब तेल उबलने लगेगा तब इनमें से छोटे लड़के को इस में डाल देना। अब यह मौत के कितने नज़दीक है, बताओ?" राजा ने पूछा।

"महाराज! एक बार ऐसा हुआ कि मैं मौत के इससे भी अधिक नज़दीक था। परन्तु, में तब भी जीते जी निकल गया।" काले चोर ने कहा।

"अगर यह बात सच निकली कि तुम इससे अधिक मौत के पास थे, तो मैं इसको छोड़ दूँगा।"



"तो मेरा किस्सा भी सुनिये।" काले चोर ने यों कहानी सुनानी शुरू की।

*   *   *

छुटपन में मैंने भी जमीन्दार की तरह जिन्दगी बिताई थी। क्योंकि तीन पिशाचिनियों ने मेरा सर्वनाश कर दिया था, मुझे चोरी का पेशा करना पड़ा। ये पिशाचिनियों भी राजकुमारियाँ थीं, जो शापग्रस्त थीं। ये दिन भर तो बहुत सुन्दर दिखाई देती पर रात को भयङ्कर बुढ़ियायें लगतीं। इधर उधर घूमतीं। हर रोज रात को आकर मेरी धन दौलत चुराकर ले जाती।

एक दिन मैं इनको पकड़ने के लिए उनके पीछे गया। वे एक पहाड़ के बिल में गईं। उनके साथ मैं भी गया। वह बिल नदी के किनारे नीचे चला गया था। उसके अन्त में वे पिशाचिनियों रहा करती थीं। चूल्हे पर एक बर्तन में उनका खाना बन रहा था। तीनों पिशाचिनियाँ उसके चारों ओर बैठी थीं।

मैंने इधर उधर देखा, उन पर एक चट्टान लुढ़का दी। चट्टान उनके चूल्हे के बर्तन से जोर से टकराया और वह टूट गया। पिशाचिनियों ने सिर ऊपर करके मुझे देखा। जल्दी जल्दी वे ऊपर आई। मैं बिल से बाहर निकलकर जोर से भागने लगा। जब देखा कि पिशाचिनियाँ बहुत नजदीक आ रही थीं, तो अपनी रक्षा करने के लिए एक पेड़ पर चढ़ गया।

तुरन्त बड़ी पिशाचिनी ने दूसरी पिशाचिनी को कुल्हाड़ा बना दिया और तीसरी को शिकारी कुत्ता, फिर उसने पेड़ पर कुल्हाड़ी मारी। उस चोट से पेड़ का तना एक तिहाई कट गया। उसने फिर एक बार कुल्हाड़ी मारी, इस बार पेड़ आधा कट गया। एक ओर चोट मारती तो पेड़ टूट जाता।



पिशाचिनी तीसरी चोट करने जा रही थी कि मुरगे ने बाङ्ग दी। तुरन्त वह पिशाचिनी, उसके हाथ की कुल्हाड़ी और शिकारी कुत्ता राजकुमारियाँ बन गई और वे चली गई।

काले चोर ने यह किस्सा सुनाकर पूछा-"महाराज! उस समय मैं इस लड़के की अपेक्षा मृत्यु के अधिक समीप था न?"

"हाँ, सच है, इसे जिन्दा छोड़ दो। अब दूसरे को डालेंगे। उबल उबल कर तेल में झाग भी आ गई है। यह मौत के कितने पास है?" राजा ने पूछा।

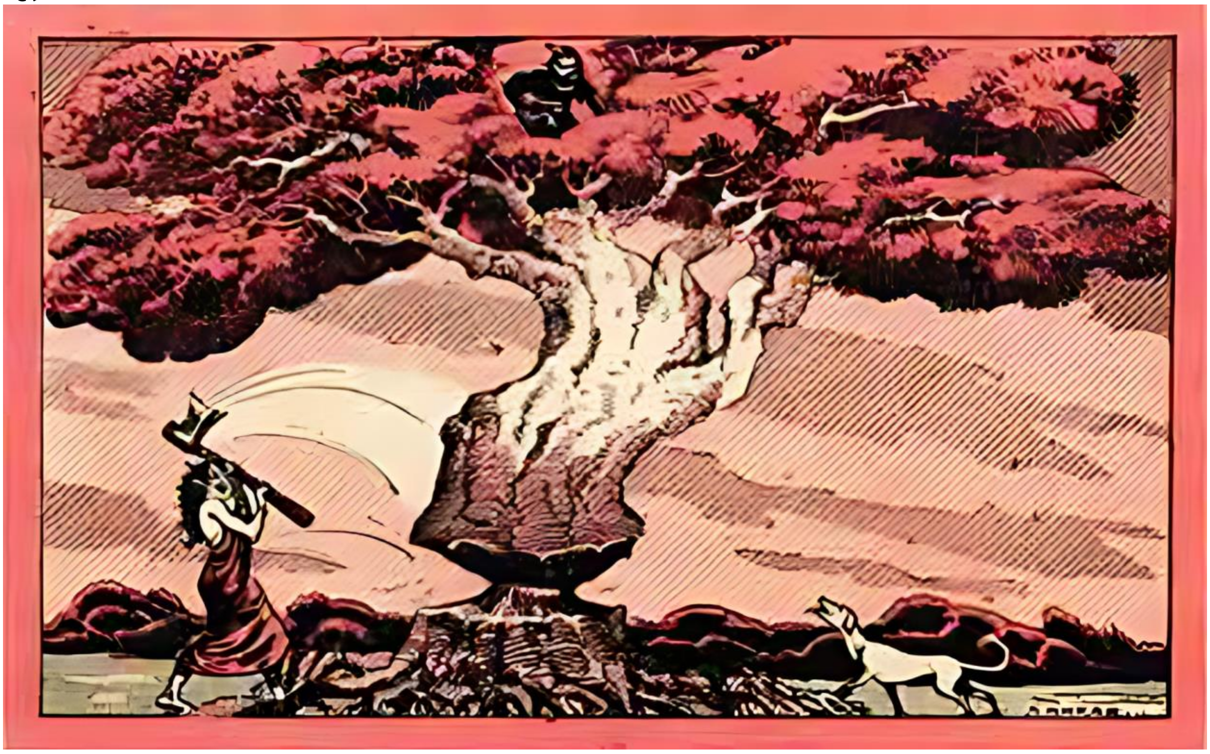
"महाराज, मैं इससे भी अधिक मौत को पास आकर जिन्दा बचकर निकल गया हूँ।" काले चोर ने कहा।

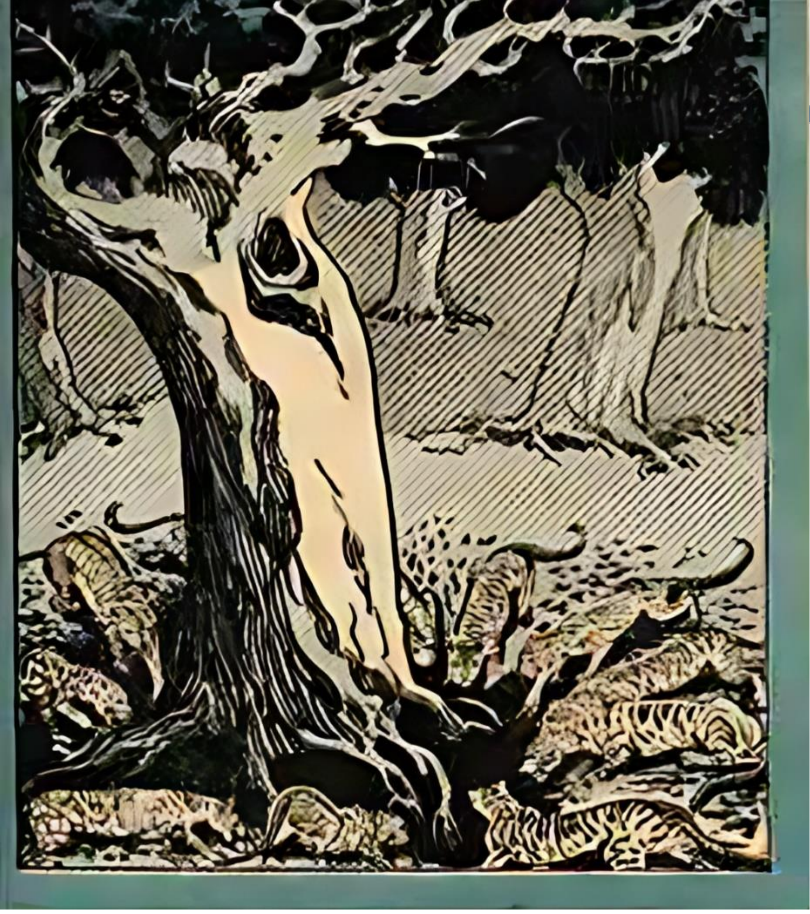
"तो वह भी सुनाओ। अगर यह सच हुआ, तो इसको भी जिन्दा छोड़ दूँगा।" राजा ने कहा।

"तो सुनिये।" काले चोर ने यह किस्सा सुनाना शुरु किया।

* * *

क्योंकि मैंने उनका बर्तन तोड़ दिया था, इसलिए उन्होंने मेरा सर्वनाश करके मुझ से बदला लिया और मुझे चोरी के इस पेशे में भी उतारा।





एक दिन रात को मैं एक भैंस और गौ को चुरा कर घर ले जा रहा था। चलते चलते पैर थक गये थे। मैं पेड़ों के झुरमुट में सुस्ताने के लिए बैठ गया। कड़ी सरदी पड़ रही थी। भैंस को मैंने एक पेड़ से बाँध दिया। गौ को एक और पेड़ से। चकमक पत्थर की मदद से आग बनाकर मैं हाथ सेंक रहा था कि यहाँ तेरह शेर आये। उनमें बारह तो मामूली शेर थे और तेरहवाँ बहुत बड़ा शेर था। शेर बड़े भूखे थे।

मैं देख रहा था कि बड़ा शेर भैंस पर कूदा। उसे मारा। स्वयं उसने आधा खाया और आधा साथ के शेरों को खाने दिया। मैं डरता रहा कि अगर हिलूँगा तो वे मार देंगे। इसी भय से मैं काँपता काँपता पड़ा रहा।

भैंस खा ली थी, फिर भी लगता था कि शेरों की भूख मिटी न थी। वे गये नहीं। बड़ा शेर गौ पर लपका। उसे भी उसने मार दिया और शेर भी पहले की तरह उसे खाने लगे। यह सोच कि अगली बारी मेरी थी, मैंने अपने कपड़े उतारकर एक ठूँठ पर रख दिये। मैंने अपनी पगड़ी भी उतारकर उसपर रखी और जब शेर खाने में मस्त थे, तब मैं पेड़ पर जा चढ़ा।

सिवाय हड्डियों के शेरों ने पूरी की पूरी गौ खा ली। फिर मेरे लिए वे खोजने लगे। इतने में बड़े शेर ने सिर उठाकर मुझे पेड़ पर देखा। फिर और शेरों को बुलाया। सब शेर मिलकर अपने नाखूनों से पेड़ का तना खरोंचने लगे। जल्दी ही पेड़ टूट कर गिर गया। परन्तु तब तक मैं एक और पेड़ पर जा चढ़ा था।

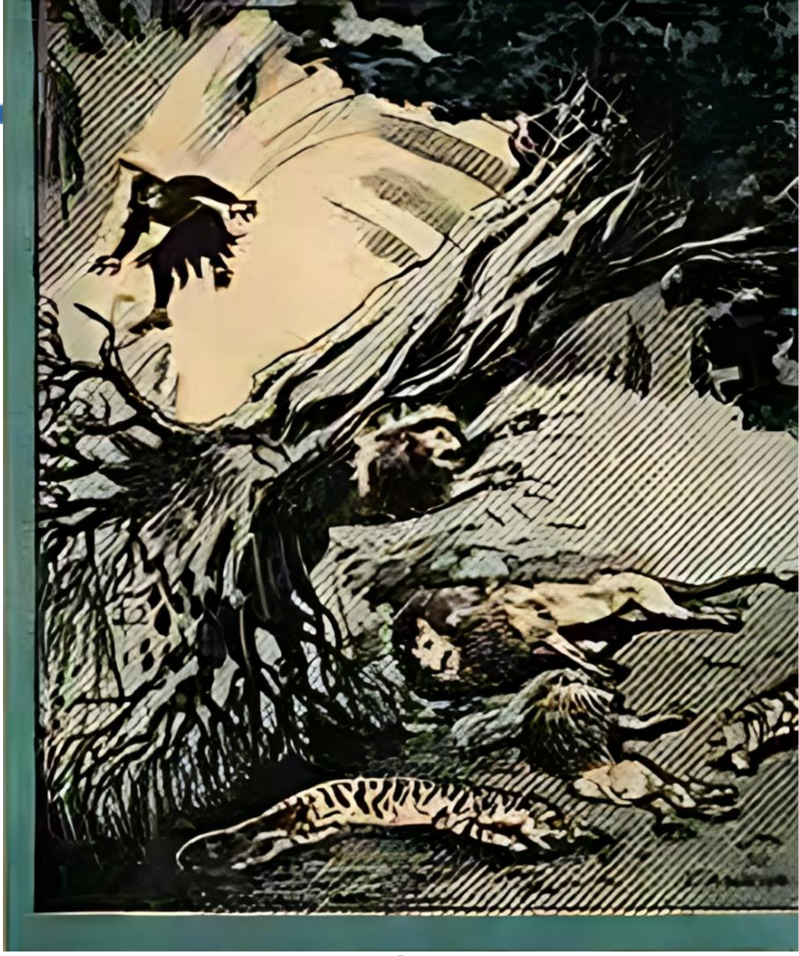
फिर शेरों ने उस पेड़ को भी नाखूनों से खरोंच खरोंच कर नीचे गिरा दिया। परन्तु मैं तीसरे पेड़ पर जा कूदा। इस

तरह वे सब पेड़ गिराते जाते थे। मैं आखिरी पेड़ पर जा कूदा। शेरों ने उसे भी नाखूनों से खरोंच खरोंचकर गिराना शुरु किया। मैने सोचा कि मैं जीवित न बचूँगा।

इतने में जाने कहाँ से बारह शेर और एक बब्बर शेर आया और वे और शेरों से जा मिड़े। उनका भयङ्कर युद्ध हुआ। बड़े शेर और बब्बर शेर के सिवाय सब शेर उस युद्ध में मारे गये। फिर थोड़ी देर बाद बड़ा शेर भी मर गया। बब्बर शेर चायल था। उसी समय बड़ा तूफान आया। जिस पेड़ पर में बैठा था, वह भी टूट गया और वह बब्बर शेर पर जा गिरा। उस चोट से वह भी मर गया।

काले चोर ने यह कहानी सुनाकर पूछा-"महाराज! आप जानते हैं न कि उस दिन मृत्यु मेरे अधिक पास थी, वजाय इन राजकुमारों के?"

"सच है। उसे जिन्दा छोड़ दो। अब बड़े राजकुमार को इसमें डालूँगा। बताओ यह मौत के कितने नजदीक है?" राजा ने पूछा।



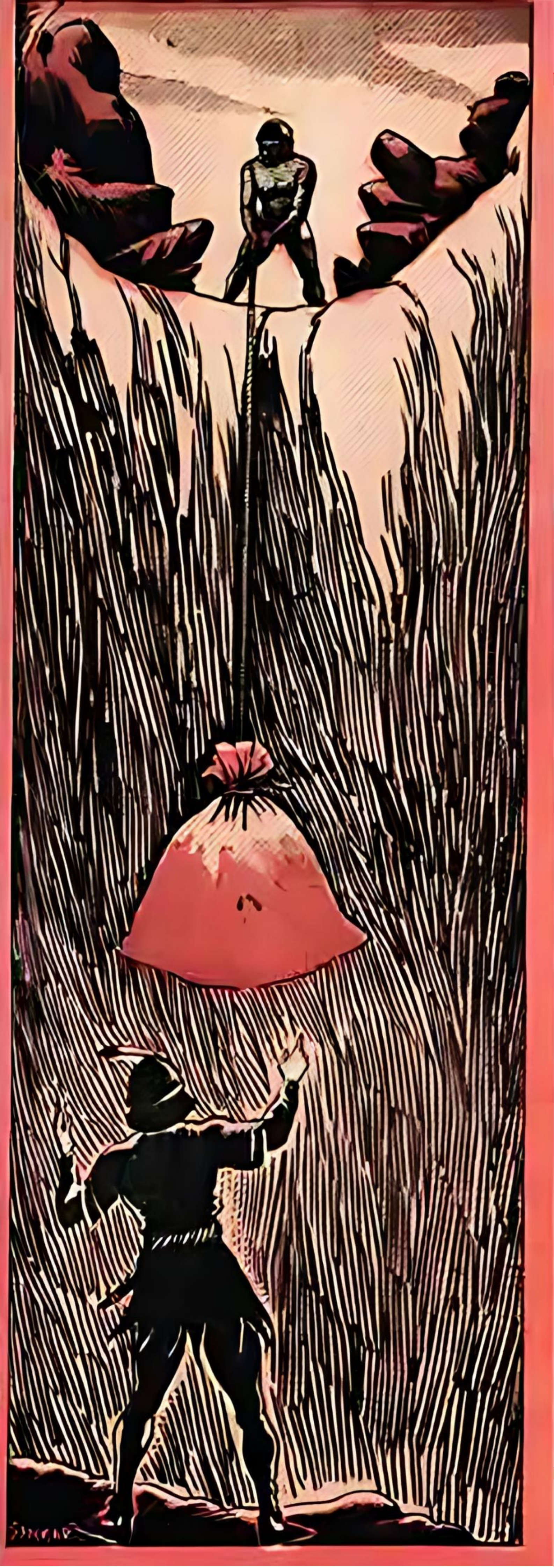
"महाराज! एक समय ऐसा भी हुआ, में इस लड़के की अपेक्षा मृत्यु के अधिक समीप था।" काले चोर ने कहा।

"अगर यह बात सच होगी तो इसे भी जिन्दा छोड़ दूँगा।" राजा ने कहा।

"तो सुनिये।" काले चोर ने कहानी सुनानी शुरु की।

* * *

जब चोर के रूप में मेरी ख्याति फैली तो शिष्य भी चोर विद्या सिखने के लिए आने लगे। उनमें एक बड़ा होशियार था। थोड़े दिनों में वह मुझे ही मात कर बैठा।



उस इलाके में एक राक्षस रहा करता था। यह बहुत से राजाओं को लूट लाट कर धनी हो गया था। मैं अपने शिष्य को लेकर उसकी गुफा लूटने निकला।

राक्षस की गुफा में जाने के लिए एक ही एक रास्ता था। पहाड़ पर चढ़कर एक खोह में से नीचे जाना होता था। बिना रस्सी और सीढ़ी के यह सम्भव न था। ऐसा समय देखकर जब राक्षस गुफा में न था, हम पहाड़ पर चढ़े। रस्सी के सहारे शिष्य को मैंने गुफा में उतरने के लिए कहा। और उसे खूब सोना बटोरकर ऊपर भेजने के लिए हिदायत की।

मेरे शिष्य ने कहा-"नहीं, मुझे बड़ा डर लग रहा है। आप ही उतरिये। मैं रस्सी के सहारे आपको ऊपर खींच लूँगा।" मैं मान गया और रस्सी के सहारे राक्षस की गुफा में उतरा। वहाँ सोना रखकर उसे रस्सी में बाँध दिया। मेरे शिष्य ने उसे ऊपर खींच लिया।

"रस्सी ऊपर छोड़ो। मैं ऊपर आ जाऊँगा।" मैं चिल्लाया।

"मेरा शिष्यत्व अब खतम हो गया है। बाकी सोना लेकर आप आराम से ऊपर चले आइये।" यह चिल्लाकर मेरा शिष्य, मुझे राक्षस की गुफा में छोड़कर चलता हुआ। मुझे कुछ न सूझा कि क्या करूँ? राक्षस ने एक कोने में कई शवों को जमा कर रखा था। मैं भी उन शवों के बीच में बिना हिले-डुले लेट गया।

अन्धेरा होने का बाद राक्षस कुछ और शवों को लेकर वहाँ आया। उन शवों को शवों के ढेर में डालकर, उसने खाना तैयार करने के लिए आग बनाई। फिर वह एक बड़ा-सा बाँस का टोकरा लाया, उसमें तीन-चार शव रखकर उसने टोकरे को एक बड़े भारी बर्तन में उलट दिया।

जिन शवों को राक्षस ने टोकरे में रखा था, उनमें मैं भी था। परन्तु मैं टोकरे के बाँस से चिपका रहा। जब टोकरे को उसने उस कढ़ाई में उलटा, तो मैं नीचे न गिरा। राक्षस ने टोकरा नीचे फेंक दिया। खाना तैयार होने के बाद खा पीकर आराम से सो गया।

जब मैंने राक्षस को खर्राटें मारते देखा, तो मैं टोकरे से बाहर आया। राक्षस ने





जिस सीढ़ी का गुफा में आने के लिए उपयोग किया था उस पर से मैं ऊपर चढ़ गया और घर चला आया।

काले चोर ने यह कहानी सुनाकर पूछा-"देखा आपने, में मौत से किस तरह बाल-बाल बच गया था। क्या यह लड़का मृत्यु के उतने समीप है?"

"नहीं, इस लड़के को छोड़ दो। परन्तु तुझे अब तेल में डाला जा सकता है। तुम मानते हो कि तुम कभी मौत के इतने पास न थे?" राजा ने कहा।

"हाँ, मैं था। इससे भी अधिक मैं पास था। पर तब भी बचकर निकल गया था।" काले चोर ने कहा।

कहाँ, कहाँ, कब! क्या हुआ?" राजा ने पूछा।

"बताता हूँ, सुनो।" काले चोर ने यह सुनाया।

*   *   *

एक बार मैं धूम रहा था। मैंने एक घर में देखा। उसमें रहनेवाले भूख से व्याकुल थे। उसमें एक स्त्री दिखाई दी। उसकी गोदी में एक छोटा लड़का था। उसके हाथ में एक चाकू था। यह आँसू बहाती लड़के को मारनेवाली थी कि उसको जोर से हँसता देख उसने चाकू दूर रख दिया।

मुझे उसका यह कार्य बड़ा विचित्र लगा। "कौन हो तुम? इस लड़के को देख रोती हो और उसे मारने की भी कोशिश कर रही हो?"

"मैं एक अभागिन हूँ। कुछ दिन पहले मैं अपने माँ-बाप के साथ एक मेले में आई। तब तीन राक्षस मुझे यहाँ उठा लाये। आज ही बड़ा राक्षस मुझसे विवाह करने जा रहा है। कल ये राक्षस कहीं

से इस को उठा लाये और कह गये कि इसे पका कर खाना बनाओ। अगर उनके आने से पहले मैंने इसे काटकर खाना तैयार न किया, तो मेरे प्राण न बचेंगे।" उसने कहा।

"इस लड़के को न मारो। मेरे पास सूअर का बच्चा है। उसे बनाओ। वे भेद न मालूम कर सकेंगे। ताकि उनको सन्देह न हो, इसलिए इस लड़के की छोटी-सी अंगुली थोड़ी-सी काटकर एक तरफ फेंक दो।" मैंने उसको यह सलाह दी। उसने वैसा ही किया।

राक्षस आये। उन्होंने सूअर का माँस बड़े स्वाद से खाया। लेकिन उनकी भूख न मिटी। बड़ा राक्षस किसी की खोज करता रसोई घर में आया। वह मुझे देख मुझे कन्धे पर डालकर चला। मैंने उसकी छाती में छुरी भोककर मार दिया। फिर दूसरे राक्षस ने आकर मुझे कन्धे पर डाला। मैंने उसको भी मार दिया। तीसरे राक्षस ने देखा कि दो बड़े राक्षस गये तो पर वापस न आये, तो उसे सन्देह हुआ। वह भी दरवाजा खोल कर आया। उसने जोर से मुझ पर अपनी गदा फेंकी।



मैं एक तरफ हट गया। गदा भूमि में तीन फीट जा घुसी। वह उसे बाहर निकाल रहा था कि मैंने उसके पेट में छुरी भोंक कर उसको मार दिया। तीनों राक्षसों के मारे जाने के कारण मेरे प्राण तो बचे ही, उस स्त्री और उस बचे के प्राण भी बचे।

काले चोर ने यह कहानी सुनाकर पूछा-"जितना मैं उस दिन मौत के नज़दीक था, क्या आज उतने नजदीक हूँ?"

"नहीं, अगर हो भी तो, मैं तुम्हें न मारूँगा। क्योंकि उस दिन जिसकी

तुमने रक्षा की थी वह मैं ही हूँ। चाहो, तो मेरी छोटी अंगुली देखो।" कहकर राजा ने अपनी छोटी अंगुली दिखाई।

ऋतुपर्ण महाराजा उठा। उसने काले चोर को गले लगाया। मेरे पिताजी ने तुम्हें बहुत ढूँढ़वाया, ताकि तुम्हें वे ईनाम दे सकें, पर तुम कहीं दिखाई न दिये। यह जानने के लिए कि मुझे बचानेवाले तुम थे कि नहीं, इसलिये इतनी देर तुम्हारी कहानियाँ सुनता रहा।"

फिर उसने काले चोर को बहुत-से ईनाम दिये। अपने विचित्र घोड़ों को विदर्भ के राजकुमारों को उसने भेंट में दे दिये। उन्हें उन के घर भेज दिया।

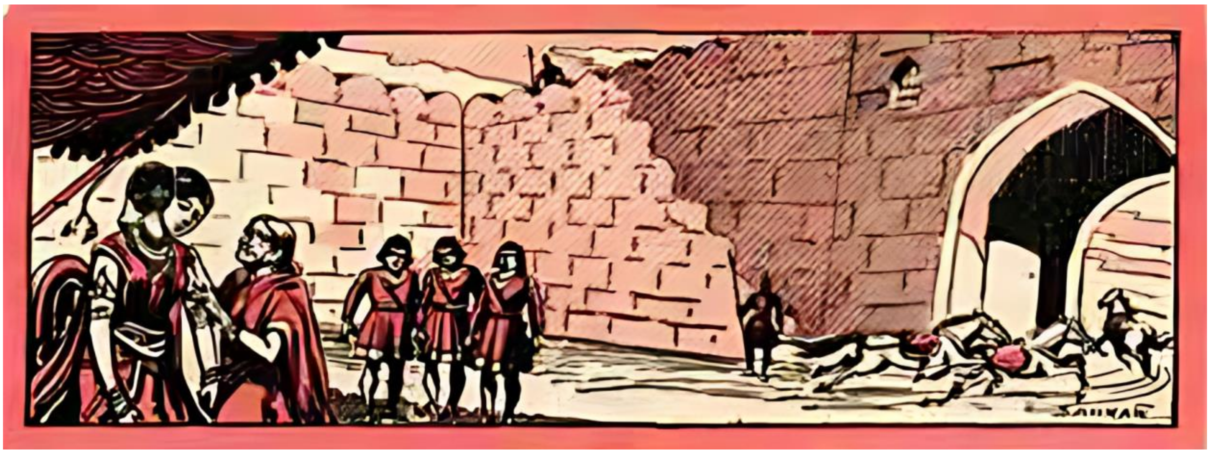
जब राजा की दूसरी पत्नी ने राजकुमारों को विचित्र घोड़ों को लाता देखा तो चकित हो उठीं। पर उसने सोचा, मेरे लड़के को भले ही राज्य न मिले.... पर इन राज्यों से अधिक कीमती विचित्र घोड़े तो मिलेंगे। उसने तसल्ली कर ली।

"तुम्हारी इच्छानुसार ऋतुपर्ण के विचित्र घोड़ों को लाकर दे दिया है और हमने अपनी शर्त पूरी कर ली है।" कहकर तीनों ने उन घोड़ों को छोड़ दिया। वे वायु की गति से ऋतुपर्ण के पास चले गये।

"मुझे धोखा दिया है। तुमने मुझे घोड़े नहीं सौंपे हैं।" रानी चिल्लाई।

"हमारी शर्त विचित्र घोड़ों को लाने की थी। सौपने की नहीं थी। न तुमने यह कहा ही था।" राजकुमारों ने कहा।

यह सुनते ही रानी का दिल थम गया। वह वहीं गिर गई और मर गई।





कुशीनर देश में देववर्मा नाम का एक क्षत्रिय रहा करता था। वह बाण विद्या और तलवार चलाने में बहुत प्रवीण था। परन्तु वह बहुत गरीब था। जङ्गल में उसका एक किला था। सिवाय हथियारों के और एक पञ्चकल्याणी घोड़े के उसके पास कुछ न था। उस घोड़े पर सवार हो वह देश देशान्तर में घूमता, त्योहारों के अवसरों पर यदि कोई राजा युद्ध कला के प्रदर्शन की व्यवस्था करता तो वह उनमें भाग लेता। जो कुछ ईनाम मिलता उसीसे गुजारा करता।

जब पैसे की सख्त जरूरत हुई तब उसने हथियार तक बेचे, पर घोड़े को किसी दाम पर भी न बेचा। उस तरह का घोड़ा कुशीनर देश में कहीं ढूँढ़े भी न मिलता। वह उसको अपने प्राणों से भी अधिक समझता।

देववर्मा के किले से कुछ दूरी पर सुप्रतिष्ठ नाम का एक राजा था। उसके एक लड़की थी, जिसका नाम मालावती था। वह बहुत सुन्दर थी। इसलिए उससे शादी करने के लिए बहुत से लोग आये। पर वह बहुत लालची था। वह इस प्रतीक्षा में था कि उसकी लड़की से कोई धनी शादी करने आये।

दुर्भाग्य से मालावती ने गरीब देववर्मा से प्रेम किया। क्योंकि देववर्मा भी उससे प्रेम करता था, इसलिए वे छुपे छुपे मिलते और एक दूसरे को अपने प्रेम के बारे में बताते।

देववर्मा लगभग हर रोज़, अगर मालावती से एक क्षण भी मिलने का मौका मिलता तो अपने घोड़े पर सवार हो, जङ्गल की पगडण्डी से, उससे मिलने के लिए



सुप्रतिष्ठ के नगर चला जाता। राजकुमारी से मिलकर फिर वापस उसी रास्ते आता।

एक बार देववर्मा ने साहस करके सुप्रतिष्ठ का दर्शन किया और उससे कहा-"मैं आपकी लड़की प्रेमवती से प्रेम करता हूँ। उसका मुझसे विवाह कीजिये।"

सुप्रतिष्ठ जोर से हँसा। "तुम्हारे पास सिवाय पञ्चकल्याणी के है ही क्या? बिल्कुल गरीब हो।"

देववर्मा सिर नीचा करके घर वापस आ रहा था। "हम दोनों का विवाह असम्भव है। अगर सब देवता भी इकट्ठे हो गये तो भी हम दोनों का विवाह न कर पायेंगे।"

इसके कुछ दिन बाद धनगुप्त नाम का एक आदमी सुप्रतिष्ठ से मिलने आया। "मैं मशहूर करोड़पति हूँ। क्योंकि आप भी सम्पन्न हैं, यदि हम दोनों की सम्पति मिल गई, तो हमसे बड़ा धनी कुशीनगर में कोई न होगा। आप अपनी लड़की का मुझ से विवाह कीजिये।"

धनगुप्त उम्र में करीब करीब सुप्रतिष्ठ जितना ही था। तो भी धन के लोभ में वह अपनी लड़की को उसे देने के लिए मान गया। सबने इस विवाह का परिहास करना शुरु किया। पर कोई भी सुप्रतिष्ठ का निश्चय न बदल सका।

मालावती उसके बारे में सोचकर जो उसका पति न हो पाया था और उसके बारे में, जो होने जा रहा था, बात बात पर रोती।

अगले दिन ही मुहूर्त निश्चित किया गया। शादी में दूल्हे का जलूस निकालने के लिए एक अच्छे घोड़े की जरूरत हुई। "देववर्मा से यह कहकर कि मैंने कहा है, उसका घोड़ा ले आओ।" सुप्रतिष्ठ ने

अपने आदमी जङ्गल में देववर्मा के पास दौड़ाये।

जब उन्होंने आकर घोड़ा माँगा, तभी देववर्मा को मालावती के विवाह के बारे में मालूम हुआ। उसने बिना कुछ कहे अपना घोड़ा सुप्रतिष्ठ के नौकरों को दे दिया और स्वयं शोक सागर में डूब गया। वह रात पूर्णिमा की थी। घनगुप्त ने मालावती को चान्दनी में टहलने के लिए बुलाया। सुपतिष्ठ ने अपने मन्त्री को उसका अङ्गरक्षक होकर जाने के लिए कहा।

मालावती उसके साथ भ्रमण के लिए नहीं जाना चाहती थी। पर क्या कर सकती थी? जाना ही पड़ा। जब उसने बाहर पञ्चकल्याणी घोड़ा देखा, तो उसे आश्चर्य हुआ। उसके पास आकर पूछा-"यह कहाँ से आया है?" उसने सब कुछ मालूम कर लिया।

इस बीच धनगुप्त एक घोड़े पर और मन्त्री एक और घोड़े पर सवार हुए। मालावती चुपचाप पञ्चकल्याणी पर सवार हुई। दोनों सड़क पर निकले। उनके कुछ दूर जाने के बाद धनगुप्त ने घुड़सवारी



में अपनी प्रवीणता दिखाने के लिए, घोड़े को बहुत तेज़ दौड़ाया। मालावती का मन जाने कहाँ था। मन्त्री क्योंकि दिन-भर विवाह के काम में मशगूल रहा था; इसलिए वह घोड़े पर बैठा-बैठा ऊँघने लगा। पञ्चकल्याणी घोड़ा अपनी आदत के अनुसार सड़क पर से पगडण्डी की ओर मुड़ा। जङ्गल के रास्ते वह देववर्मा के किले में जा पहुँचा। मालावती तो विचार मग्न थी। उसने सिर उठाकर जो देखा तो सामने अपरिचित किला था। न सड़क थी, न साथ आये हुए लोग ही थे।

देववर्मा के द्वार रक्षकों ने मालावती के पास आकर पूछा-"आप कौन हैं? इस रात के समय किस काम पर आये हैं?" मालिक के घोड़े को पहचान कर उनको और भी आश्चर्य हुआ।

पञ्चकल्याणी पर कोई स्त्री सवार होकर आई है, यह जानकर देववर्मा हड़बड़ाता आया। मालावती को देखकर उसके आश्चर्य की सीमा न रही। पर मालावती का अपना शोक मानों जाता रहा।

"कहाँ पहुँचाना था। पञ्चकल्याणी ने निर्णय कर लिया था। मैं अब यहीं रहूँगी।" उसने कहा। देववर्मा ने पुरोहित को बुलवाकर तुरन्त उससे शादी कर ली।

मालावती के लिए रात भर खोज हुई। अगले दिन भी उसको खोजा गया। अगले दिन शाम को जब सुप्रतिष्ठ को सब बात मालूम हुई तब तक मालावती का विवाह हो ही चुका था। वह यह न चाहता था कि कोई कहे कि उसका दामाद गरीब था इसलिए उसने अपनी आधी सम्पत्ति उसके नाम लिख दी।





[२]

फारस बहुत बड़ा देश है। उस में आठ राज्य हुआ करते थे-- कास्विन, कुर्दिस्तान, लुरिस्तान, घलिस्तान, इस्फहान, शिराज, शवनकारा, तूनकैसल।

इन देशों में अच्छी नस्ल के घोड़े होते थे। वे भारत भी भेजे जाते थे। यहाँ गधों का भी काफी उपयोग था। क्योंकि बिना बहुत कुछ खाये वे वह वजन उठाते थे जो घोड़े और खच्चर नहीं ले जा पाते थे। ये उन व्यापारियों के लिए बहुत उपयोग में आते जो एक देश से दूसरे देश को रेगिस्तान में से जाया करते।

इन राज्यों में रहनेवाले दुष्ट और निर्दय थे। व्यापारियों को इन लोगों से नुक्सान न हो, खतरा न हो इसलिए तातार राजाओं ने बहुत से प्रबन्ध कर रखे थे। तब भी उनके हथकण्डे जारी रहे।

फारस के मुख्य नगरों में याज्द एक था। यह बहुत सुन्दर नगर था और व्यापार का केन्द्र भी था। यहाँ से सात रोज़ सफर करने के बाद कर्मान राज्य आता। यह फारस की सीमा पर है। यहाँ पहाड़ों में खोदने से हीरे मिला करते थे। यहाँ ऐसे भी कारीगर थे जो लोहे से अच्छे हथियार बनाया करते थे। कर्मान राज्य के बारे में एक विचित्र कथा



है। वहाँ के लोग शान्त, परोपकारी, और सीधे सादे हैं। एक बार कर्मान राजा ने अपने राज्य के बड़े बुजुगों को इकट्ठा करके कहा-"हमारे समीपवर्ती फारस में लोग धूर्त, दुष्ट और हत्यारे हैं। जबकि हमारे लोग सीधे सादे, भोले भाले हैं। इसका क्या कारण है? यह सन्देह मुझे बहुत सता रहा है।"

बुजुगों ने कहा कि यह भेद मिट्टी में है। सुनते हैं, तुरन्त राजा ने इस्फहान आदमी दौड़ाये। और वहाँ से सात जहाज भरकर अपने देश में मिट्टी मँगाई। उस मिट्टी को कई कमरों में डालकर उस पर कालीनें बिछाकर वहाँ अपने लोगों को यह दावत दिया करता। दावत खतम होने से पहले ही वे, तू तू मैं मैं करने लगते। झगड़ते। कहने का मतलब यह कि बुजुर्गों का कहना ठीक निकला।

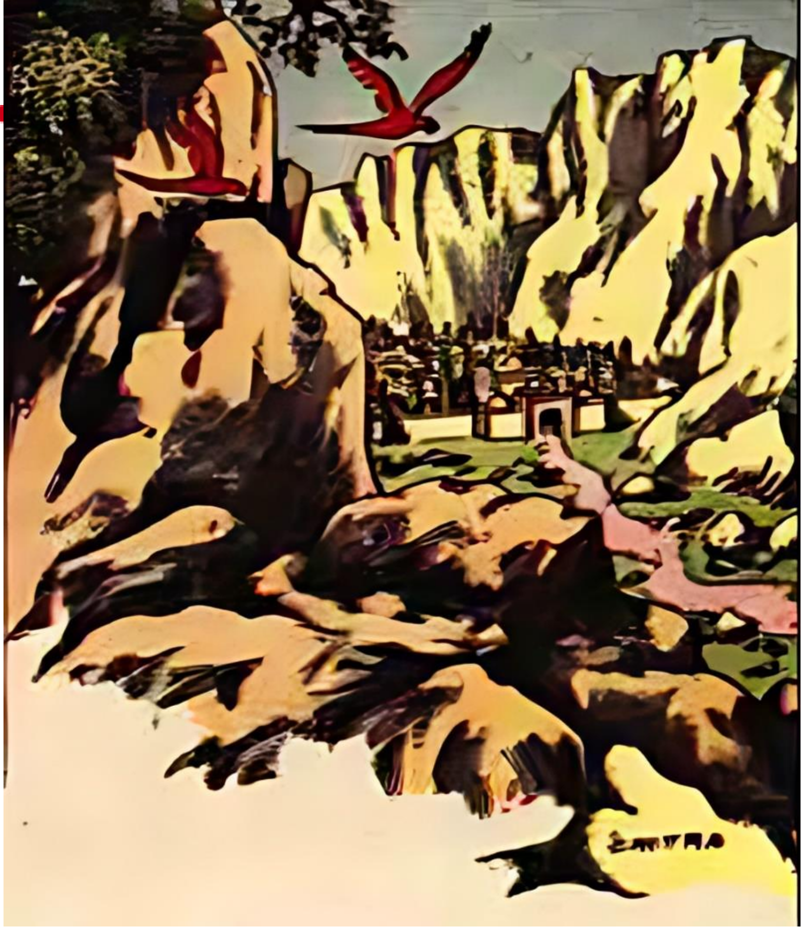
कर्मान नगर से नौ दिन के सफर के फासले पर रुद्वार नामक देश था। यहाँ करौना जाति के डाकुओं के गिरोह रहा करते थे। करौना मिश्रित जाति के थे; यानि उनके पिता तातार थे और मातायें भारतीय।

निमादार नाम का तातार दस हजार सैनिकों को साथ लेकर आर्मीनिया से बदस्वशान, पाशाय, काश्मीर आदि होता हुआ दिलवार राज्य में आया। वहाँ के सुल्तान को, जिसका नाम असिदीन था, हराकर वह स्वयं राजा हो गया। उसके साथ जो तातार आये थे उनकी भारतीय स्त्रियों की सन्तान ही ये करोना थे। कहते हैं ये मलाबार से मन्त्र शक्ति सीख कर आये थे। दिन दहाड़े ये अन्धेरा कर देते। व्यापारियों को लूटते। जो मुकाबला करते उनको मार देते। छोटों को पकड़कर गुलाम बनाकर बेच देते। रुद्वार के मैदान उपजाऊ थे। होर्मूज बन्दरगाह पहुँचकर भारतीयों

के आने की इन्तज़ार करते। अपने ऊँटों और स्वच्चरों को इन मैदानों में चरने भेजा करते। इसलिए करौना इस प्रदेश में अधिक घूमा फिरा करते थे। मार्कोपोलो इनके हाथ में बिना पढ़े जैसे तैसे निकल गया। उसके साथ जो थे उनमें से कई उनके द्वारा पकड़े गये। और मार डाले गये।

यहाँ से होर्मूज बन्दरगाह तक दो दिन का सफर था। यह बहुत मशहूर बन्दरगाह था। व्यापार का बड़ा केन्द्र भी था। यहाँ बहुत गर्मी होती थी। कभी कभी गरमियों में रेगिस्तान की तरफ से जबर्दस्त लूह चला करती। इस लह के कारण लोग स्वटमलों की तरह छटपटा कर मरते।

जो कर्मान से उत्तर की ओर जाया करते, उनका सफर बहुत ही खतरनाक रहता। तीन दिन तक रास्ते में पानी ही नहीं मिलता। उसके बाद एक गुप्त नदी मिलती थी। फिर चार दिन बिना पानी के रास्ते पर सफर करने बाद कूतान नाम का नगर आता। यहाँ से तूनकैन राज्यों की ओर आठ दिन का रास्ता था। ये राज्य फारस के उत्तर की सरहद पर थे। यहाँ एक बहुत बड़ा मैदान था।



उसमें एकाकी वृक्ष था। इस वृक्ष से एक तरफ दस मील तक और तीनों ओर सौ मील तक कोई पेड़ न था। इसलिए एकाकी वृक्ष इसे कहा जाता था। उसके बाद तुलहत नाम का देश आता। यहाँ कभी एक पहाड़ी राजा रहा करता था। उसका नाम अल्लाउद्दीन था। उसने दो पहाड़ों के बीच की घाटी में बड़े-बड़े बाग बनवाये और बड़े आलीशान मकान भी बनवाये। उन मकानों में उसने बड़ी सुन्दर स्त्रियाँ रख रखी थीं। उस प्रान्त को देख स्वर्ग की भ्रान्ति होती थी। जैसे मोहम्मद ने

स्वर्ग की कल्पना की थी, वैसे ही यहाँ दूध, पानी, शराब की नदियाँ वह बहाया करता। अगर वह अपने किसी दुश्मन की हत्या करवाना चाहता तो उनको वह अपने किले में जैसे भी हो ले आता। उनको नशे की चीजें देकर, बेहोशी के समय वह उनको बागों में स्त्रियों के पास पहुँचाता। होश आने पर उनको लगता, जैसे वे स्वर्ग में हो।

अब उनको हत्या के लिए भेजा जाता तो उनको नशे की चीजें देकर, फिर किले में लाया जाता। होश आते ही उन्हें लगता, जैसे वे स्वर्ग से दूर हो गये हो। "अगर तुम फिर स्वर्ग जाना चाहते हो, तो फलाँ राजा को मारो। मैं फिर तुम्हें स्वर्ग में प्रविष्ट कराऊँगा।" किस किसको मारने के लिए, किसको भेजना होता था, यह "पहाड़ी राजा" बड़ी होशियारी से निश्चित करता। जब वे अपना काम करके वापस आते तो उनके लिए बड़ी-बड़ी दावतें देता। जब वह उनको हत्या करने के लिए भेजता तो पीछे उनके अपने दूत भेजता, यह देखने के लिए कि वे उसकी आज्ञा का पालन कर रहे हैं। कि नहीं। वे विचारे जो सोचते थे कि वे स्वर्ग हो आये थे, मृत्यु की परवाह न करते।

छोटे खानों में से एक ने, जिसका नाम हुलाग था, इस पहाड़ी राजा के बारे में सुना। उसको मारने के लिए १२६२ में उसने एक बड़ी सेना भेजी। उस सेना ने आकर तीन साल तक उसके किले का घेरा डाला। जब खाने-पीने की चीजें किले में खतम हो गई तो पहाड़ी राजा ने हथियार छोड़ दिये। तातार खान ने पहाड़ी राजा और उसके हत्यारों को मरवा दिया। इस तरह उसने लोगों का उपकार किया।

(अभी है)



बायाँ हाथ

राजा भोज के समय में भद्रमणी नाम का एक बड़ा पण्डित रहा करता था। वह एक दिन भोज के दर्शन के लिए गया। राजा ने आदर के साथ उसको अपने पास बिठाया। क्योंकि उससे पहले कालीदास राजा के दायीं बरफ बैठा था इसलिए भद्रमणी को बायीं तरफ बैठना पड़ा। यह देख भद्रमणी ने सोचा कि वह कालीदास से कम समझा जा रहा था। यह दिखाने के लिए कि वह कालीदास से बड़ा था उसने एक श्लोक बनाया, जिसमें यह दिखाया कि बायाँ हाथ दायें हाथ से बड़ा था।

गुहत्येष रिपोरिशरः प्रतिजवं कर्षत्य सौवाजनं

त्या धनुः प्रयाति सततं संग्रामभूमावसि

यूत चौर्य मदस्त्रियंच शपथे जानाति नाय कर

(वायाँ हाथ पहले शत्रु का सिर पकड़ता है। आगे जानेवाले घोड़े को रोकता है। बाण छोड़ने से पहिले धनुष की प्रत्यञ्चा को पकड़ता है। जुआ, चोरी, दर्व्यभिचार आदि शायद नहीं करता।)

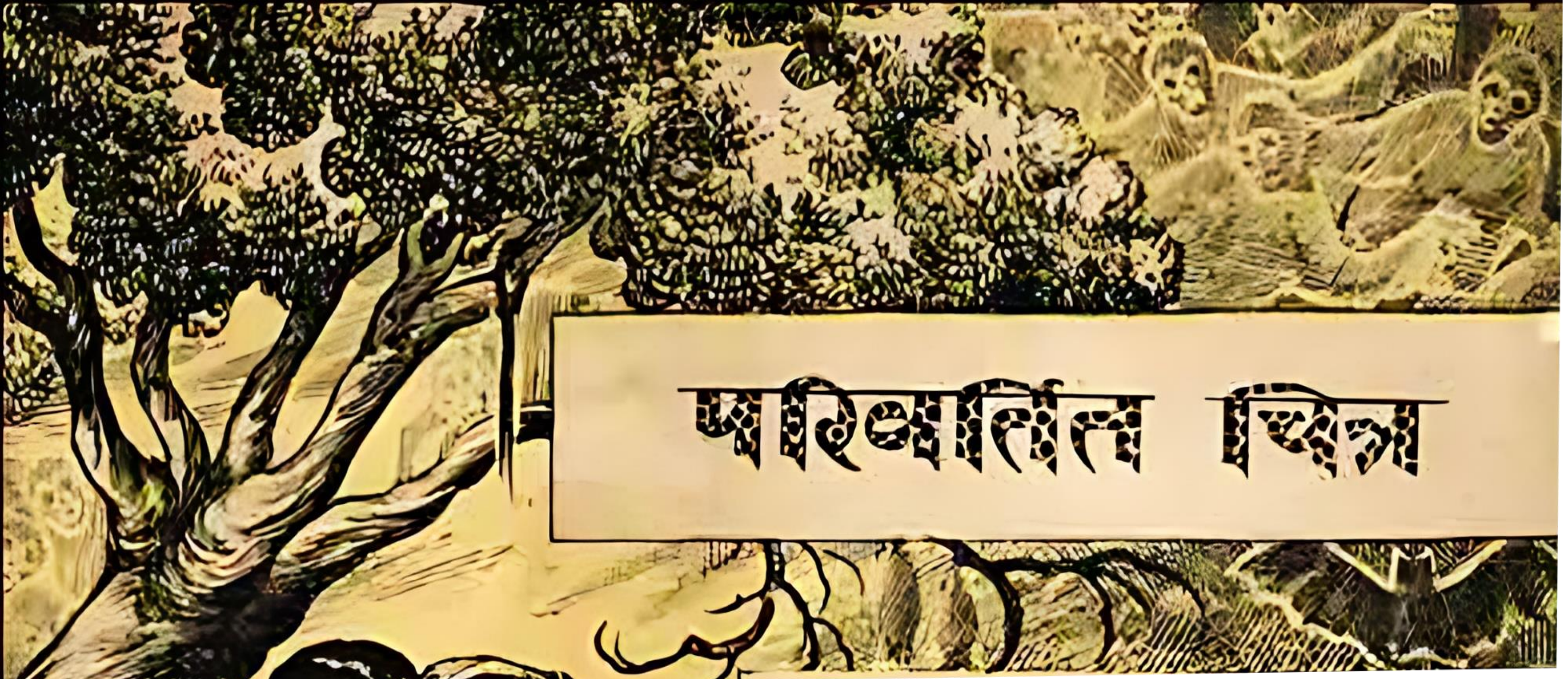
इतने में कालीदास ने श्लोक की चौथी पंक्ति यूँ पूरी की।

दानानुवततां विलोक्य विधिना शौचाधिकारी कृतः

(क्योंकि बायाँ हाथ दान देने योग्य नहीं है, इसलिए ब्रह्मा ने उसको शौचादि कार्य के लिए नियुक्त किया है।)

यह सुन भद्रमणी ने शार्मिन्दा हो सिर नीचा कर लिया।





परिवर्तित चित्र



विक्रमार्क फिर पेड़ के पास गया। शव उतारकर, कन्धे पर डाल चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा, इस संसार में कौन क्या चाहता है, हम नहीं कह सकते। कमी नागध्वज की यह इच्छा थी कि उसकी पत्नी का सौन्दर्य बिगाड़ा जाय, शायद तुम्हारी भी यही इच्छा है कि इस शव को तुम ढोते रहो। तुम्हें थकान न मालूम हो इसलिये नागध्वज की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

एक समय में उज्जयनी नगर के राजा के यहाँ नागध्वज नाम का खजाञ्ची था। यह बहुत सज्जन और उदार था। इसलिये नगर में हर तरह के लोग उसको आदर

बेताल कथाएँ

की दृष्टि से देखते। परन्तु जहाँ तक पत्नी का सम्बन्ध था, उसे उससे तनिक भी शान्ति न थी। न सुख ही मिलता था। वह बीमार तो रहती ही; फिर वह बहुत तङ्गदिल भी थी। उस के साथ कुछ दिन गृहस्थी करने के बाद उसे सुख और जीवन से ही वैराग्य हो गया। फिर वह मर भी गई।

पत्नी के मर जाने के बाद नागध्वज ने फिर शादी नहीं की। उसके मित्रों ने उसे बहुत कहा कि वह शादी कर ले, पर वह न माना। इतने में राज्य के कार्य पर उसे एक सामन्त के पास जाना पड़ा। उस सामन्त की एक बहन थी, जिसका नाम चन्द्रसेना था। नागध्वज का चन्द्रसेना ने इस प्रकार और इतना अतिथि सत्कार किया कि नागध्वज ने सोचा कि कभी उसकी पत्नी ने भी उसका इतना आदर सम्मान न किया था। नागध्वज का यह कहना था कि वह उससे शादी करेगा कि चन्द्रसेना मान गई। उसके भाई ने भी अपनी अनुमति दे दी। जल्दी मुहूर्त निश्चित किया गया और उनकी शादी कर दी गई।

जब मित्रों ने देखा कि नागध्वज चन्द्रसेना के साथ उज्जयनी वापस



आया है तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। इस नई पत्नी के आने से उसमें जो परिवर्तन हुआ था, उसे देख उसके मित्रों को सन्तोष भी हुआ। क्योंकि नागध्वज का वैराग्य तो जाता ही रहा और वह ललित कला आदि विषयों में बहुत दिलचस्पी लेने लगा। चित्रकार, कवि, गायक हमेशा उसके घर में आकर गोष्टि करते। इस परिवर्तन का कारण भी चन्द्रसेना थी।

अपने पति के जीवन में जो अन्धकारमय हो गया था, उसने उजाला किया। नागध्वज के मित्रों में शिवानन्द नाम का



एक चित्रकार था। वह बहुत मशहूर था। नागध्वज की अनुमति पर उसने चित्रसेना का एक चित्र तैयार किया। वह चित्र बहुत ही सुन्दर था। वह चित्र की तरह न लगता था, ऐसा लगता था जैसे शीशे में चित्रसेना का प्रतिविम्ब हो। सबने कहा कि शिवानन्द ने कभी ऐसा चित्र न बनाया था, जिसमें जीवन कभी यों झिलमिलाया हो। शिवानन्द ने उस चित्र को नागध्वज को उपहार में दिया।

पत्नी के चित्र को देखकर नागध्वज की खुशी का ठिकाना न रहा। जब कभी उसे वह देखता, उसे लगता जैसे वह चन्द्रसेना को ही देख रहा हो।

दस वर्ष बीत गये। नागध्वज ने जीवन में स्वार्गिक आनन्द पाया। राजा की सेवा उसने इतनी अच्छी तरह की कि वह मन्त्री बना दिया गया। उसके पाँचों अंगुली घी में थीं। हर तरह से उसका जीवन सुखी और सफल था और सब यह जानते थे कि यह सब उसकी पत्नी के ही कारण था।

इतने में चन्द्रसेना मर गई। नागध्वज के सिर पर बिजली सी गिरी। राजा ने आकर उसको आश्वासन दिया। कई मित्रों ने उसे तीर्थ यात्रा पर जाने के लिए सलाह दी क्योंकि उनका ख्याल था कि वैसा करने से उसको मनःशान्ति मिलेगी। नागध्वज ने छुट्टी लेकर तीन साल तीर्थयात्रा में बिताये।

घर आते ही उसे चित्रसेना का चित्र देख कर भ्रम-सा हुआ। इससे पहले जब कभी वह उस चित्र को देखता, तो उसे लगता, जैसे वह अपनी पत्नी को ही देख रहा हो। पर उसे अब वह चित्र वैसा न लगा।

उसने अपने मित्र शिवानन्द को बुलवा कर कहा- "शिवानन्द! अब यह चित्र,

चन्द्रसेना के चित्र की तरह नहीं है। यह चित्र आज से तेरह साल पहले की चन्द्रसेना से मिलता जुलता है। इन तेरह सालों में, उसमें जो परिवर्तन हुये, क्या तुम उन्हें इस चित्र में चित्रित कर सकते हो?"

शिवानन्द भी हैरान था। "मैंने उसी सौन्दर्य को चित्रित किया है, जो आपकी पत्नी में था। सौन्दर्य का उम्र से क्या सम्बन्ध है? यह चित्र ही तो है। चित्रित स्त्री तो नहीं है।"

"नहीं, चन्द्रसेना मर गई है। पर एक क्षण भी वह मुझसे अलग नहीं रही है। वह मेरे साथ ही बढ़ रही है। मैं उसके साथ ही तीर्थं गया। तीर्थ यात्रा के कारण हम दोनों में काफी परिवर्तन आ गये हैं। इससे पहले यह चित्र उसके समान था। पर इन तीन सालों में जो तब्दीलियाँ हुई हैं, उन्हें चित्र में दिखाओ। अगर तुम्हें मुझ पर आदर भाव है तो वह करके दिखाओ। मैं यह सोचूँगा, जैसे मेरी पत्नी पुनर्जीवित हो गई हो।" नागध्वज ने कहा।

शिवानन्द बिल्कुल चित्र न बदलना चाहता था। पर अपने मित्र की



दीनस्थिति देखकर उसने नागध्वज के बताये सब परिवर्तन किये। इस बदले हुए चित्र को देखकर जितना नागध्वज सन्तुष्ट हुआ उतना ही शिवानन्द असन्तुष्ट भी हुआ। शिवानन्द को लगा जैसे उसने अपने हाथों सौन्दर्य की हत्या कर दी हो।

जब यह देखा गया कि नागध्वज में पत्नी के निधन का शोक न रह गया था, राजा ने राज्य कार्य पर उसे दूर देशों में दूत बनाकर भेजा। वह इन कामों में इतना व्यस्त रहा कि पाँच वर्ष घर वापस न आया। घर वापस आने पर जब उसने

अपनी पत्नी का चित्र देखा तो उसे फिर भ्रम हुआ। उसे लगा कि वह चित्र वैसा न था, जैसे कि उसे होना चाहिए था। उसने फिर शिवानन्द को बुलाकर उससे चित्र बदलने के लिए कहा। शिवानन्द ने फिर चित्र बदला। उसे देख नागध्वज सन्तुष्ट हुआ। उसके कुछ दिनों बाद वह मर गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा- "राजा, क्या नागध्वज ने अपनी दूसरी पत्नी को सचमुच प्यार किया था? अगर प्रेम किया था तो उसने अपूर्व चित्र को क्यों बदलवाया था? अगर जान-बूझकर तुमने इन प्रश्नों का उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"इसमें कोई सन्देह नहीं है कि नागध्वज ने चन्द्रसेना को प्रेम किया था। परन्तु उसने पत्नी में स्थिर सौन्दर्य को ही नहीं चाहा था। उसने उसके स्वभाव को अधिक चाहा था। अगर वह सौन्दर्य को ही चाहता होता, तो सौन्दर्य में उम्र के कारण होनेवाले परिवर्तनों को यह पसन्द न करता। यद्यपि चन्द्रसेना मर गई थी, तो भी उसका स्वभाव, नागध्वज में सजीव ही था। वह उसके साथ बढ़ भी रहा था। जब जब उसे लगा कि उसके मन के चित्र में और वास्तविक चित्र में भेद आ गया था तब तब उसने चित्र में आवश्यक परिवर्तन करवाये। यह सब उसने इसलिए नहीं किया कि उसको पत्नी के प्रति प्रेम न था।"

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और वृक्ष पर जा बैठा।





सूचौ नगर से दस मील दूरी पर एक बड़ी झील थी। उसमें बहुत-से द्वीप थे। झील में पूर्वी तुङ्गतिङ्ग, पश्चिमी तुङ्गतिङ्ग ये दोनों द्वीप झील के बीचों-बीच थे।

पश्चिम के द्वीप में कावोत्सान नाम का धनी रहा करता था। उसके एक लड़की और लड़का था। लड़की का नाम चियुफाङ्ग था। काबो ने उन दोनों के लिए गुरु नियुक्त करके उनको अच्छी शिक्षा दिलवाई। चियुफाङ्ग बारह वर्ष तक पुस्तकें पढ़ने पढ़ाने की शिक्षा लेती रही। फिर उसको ऐसी विद्यायें सिखाई गई, जो स्त्रियों के लिए आवश्यक हैं। वह सोलह साल की जब हुई तो वह खूब सुन्दर भी हो गई। कावो की जिद थी कि उसका दामाद शिक्षा में व सौन्दर्य में उसकी लड़की से कम न हो। धनी था, इसलिए वह वर पक्ष से तो क्या लेता! और तो और वह होनेवाले दामाद को बहुत-सा दहेज भी देने के लिए तैयार था।

चियुफाङ्ग की बुद्धिमता, सौन्दर्य के बारे में जानकर कई ने विवाह करानेवाले दलालों को कावो के पास भेजा। कई बार ऐसा हुआ कि दलाल उसके पास जाकर किसी का गुण गान करते और जब वह उनको देखता तो उन्हें वे पसन्द न आते। कावो ने इन दलालों की बातें सुनने से इनकार कर दिया-"मैं तुम्हारे बढे चढे वर्णन नहीं सुनना चाहता। लड़के को साथ लाओगे तो तभी मैं तुम्हारी बात सुनूँगा।" उसने उनसे कह दिया।

सूचौ के पास एक ग्राम में चियने चिङ्ग नाम का एक विद्यार्थी रहा करता था।



भी शादी न हुई थी। उसके पास पैसा तो था, पर उसे मनपसन्द सुन्दर लड़की कोई न मिली। वह था तो बदसूरत पर अच्छे अच्छे कपड़े पहनकर यह अनुभव करता जैसे बहुत खूबसूरत हो। वह खास पढ़ा लिखा भी न था। यद्यपि दोनों में बहुत भेद था, पर दोनों बड़े मिल जुल कर रहते। क्योंकि वह उसका भरण पोषण कर रहा था, इसलिए चियेन हमेशा उसका कृतज्ञ रहता, क्योंकि वह उससे अधिक अक्लमन्द था, इसलिए येन हमेशा उसकी सलाह लेता।

उसने बहुत से ग्रन्थ पढ़े थे। देखने में भी बहुत खूबसूरत था। उसका परिवार तो पण्डितों का था, पर गरीब था। छुटपन में ही उसके माता पिता गुज़र गये थे। यद्यपि वह बड़ा हो गया था, पर गरीबी के कारण पत्नी न पा सका था।

सौभाग्य से उस साल एक और मदद मिली। येन चुन नामक एक धनी सम्बन्धी ने उसे अपने घर रहने दिया और उसकी शिक्षा के लिए हर सुबिधा दी।

येन चुन, चियेन चिङ्ग दोनों करीब करीब एक ही उम्र के थे। येन बड़ा था, इसलिए चियेन उसे "भाई साहब" कह कर पुकारता। येन की

येन का एक दूर का रिश्तेदार, जिसका नाम यू था, व्यापार के काम पर पश्चिम के द्वीप में होकर आया। बातों बातों में उसने चियुफाङ्ग के सौन्दर्य के बारे में उससे कहा। यून ने जैसे भी हो उस सुन्दर लड़की से शादी करनी चाही।

"तुम मेरी तरफ से जाओ और इस शादी को तय कर दो। अगर तुमने मेरे लिए यह किया तो मैं अपना दिया हुआ कर्ज वापस न लूँगा और और कर्ज भी दूँगा।" येन ने यू से कहा।

"यह इतनी आसानी से होनेवाला काम नहीं है, कावो दलालों से ऊब गया है। बिना लड़के को देखे बात न करेगा।" यू ने कहा।

तो, चलो हम दोनों मिलकर चलें।" येन ने कहा।

"तुम जैसे बदसूरत को, वे मर जायेंगे, पर लड़की न देंगे।" यू ने सोचा तो पर कह न सका। "पर जाने से, लगता है, हमारा काम बनेगा नहीं। तुमसे अधिक सुन्दर व्यक्तियों को उन्होंने नहीं स्वीकार किया है।" उसने कहा।

"अगर यह बात है तो मेरा न दिखाई देना ही अच्छा है। तुम मेरी तरफ से जाओ और शादी तय करो। अगर तुमने होशियारी से काम लिया तो मुझे बिना देखे शादी के लिए मान जायेंगे। कोशिश करने में क्या खराबी है?" येन ने कहा।

येन की बात यू ठुकरा न सका। वह पश्चिम के द्वीप के लिए निकला। उसके साथ येन ने अपने आदमी को भी भेजा। कावो ने येन के बारे में सुनकर यू से कहा-"तुम जिस लड़के के बारे में कह रहे हो, यदि



यह तुम सा पण्डित हो, सुन्दर हो, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु बिना उसको देखे सम्बन्ध निश्चित नहीं कर सकता। उसको ले आओ।"

"हुजूर! यह लड़का हमेशा किताबों में डूबा रहता है। कहीं भी नहीं आता जाता। यही नहीं वह बड़ा स्वाभिमानी भी है। अगर शादी की बात तय करने आया और शादी नहीं हुई तो वह इतना शर्मिन्दा होगा, जैसे फाँसी की सजा सुना दी गई हो।" कावो ने कुछ देर सोचकर कहा-"अच्छा तो मैं ही आपके साथ आकर उसको देखूँगा। अगर वह उतना पण्डित

और सुन्दर निकला तो अवश्य में अपनी लड़की की शादी उससे कर दूँगा।"

यू घबरा गया। कावो ने आकर यदि येन को देखा तो वह कभी भी लड़की न देगा। इसलिए उसने कहा-"आप क्यों कष्ट उठाते हैं? मैं जाकर जैसे भी हो, उसे बुलाकर लाऊँगा।" कहकर वह घर वापस चला आया।

यू की लाई हुई खबर सुनकर येन को कुछ भी न सूझा। अपने नौकर से पूछताछ करवाई। पर उसने मालूम किया कि उसने कोई झूठ न कहा था, उसे तब एक उपाय सुझा। उसने यू को एक दिन अपने घर बुलाकर कहा-"फिर एक बार पश्चिमी द्वीप जाना होगा।"

"कोई फायदा नहीं। इस सम्बन्ध का ख़याल छोड़ दो।" यू ने कहा।

"नहीं, नहीं। मेरा एक भाई है। नाम उसका चियेन है। वह मुझसे अधिक खूबसूरत है। पढ़ा लिखा भी है। मेरा नाम कहकर उसे ले जाओ। यदि शादी तय हो गई तो मुहूर्त निश्चित करवाकर ऐन समय पर आकर में शादी कर आऊँगा। शादी के बाद अगर लोगों को यह पता



भी लग गया, तो कोई कुछ न कर सकेगा।"

"क्या चियेन इसके लिए मानेगा?" यू ने पूछा।

"क्यों नहीं मानेगा? वह मेरा कृतज्ञ है। अगर यह बता दिया गया कि यह काम उससे ही हो सकेगा, तो वह कुछ न कहेगा।" येन ने कहा। फिर उसने चियेन से अपनी चाल के बारे में कहा।

चियेन ने सब सुनकर कहा-"तुम्हारी सहायता करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अगर चाल मालूम हो गई तो हम दोनों की मिट्टी पलीत होगी।

"तुम्हें लड़की का पिता नहीं जानता। इसलिए वह कुछ न कर सकेगा। अगर कुछ हुआ भी तो दलाल जिम्मेवार ठहराया जायेगा। तुम इतनी मदद मेरे लिए करो।" येन ने कहा।

चियेन को अच्छे अच्छे रेशमी कपड़े सिलवाकर दिये गये। यूं सुन्दर था ही। और जब उसने रेशमी कपड़े पहने तो उसका सौन्दर्य चमकने सा लगा। यू उसको साथ लेकर नाव में पश्चिमी द्वीप में कावो के घर पहुँचा। लड़कीवाले चियेन को देखकर बहुत खुश





हुए। "हमारी लड़की से सौन्दर्य में कोई कम नहीं है। कभी न सोचा था कि इस तरह का सम्बन्ध मिल सकेगा।"

कावो ने उसका पाण्डित्य परखने के लिए उस गुरु को बुलाया, जिसने उसके बच्चों को पढ़ाया लिखाया था। चियेन यह जानकर कि वह पण्डित खास जानता चानता न था; प्राचीन काव्यों से, शास्त्रों से लगातार उद्धरण उगलने लगा।

सब सुनने के बाद पण्डित ने जाते हुए कहा-"बहुत पढ़ा लिखा है। बड़ा पण्डित है।"

कावो को लगा, जैसे उसके सिर से बहुत सा भार हट गया हो। बहुत दिन बाद उसे ठीक दामाद मिल रहा था। उसकी लड़की भी लड़का देखकर खुश हुई। उसने यू से कहा-"अच्छा लड़का लाये हो। यथाशीघ्र मुहूर्त निश्चित करके आगे का काम करवाओ।"

काम करके यू चियेन के साथ वापस चला आया। येन बड़ा खुश हुआ कि काम बन गया था। उसने विवाह का मुहूर्त निश्चित करके लड़की के लिए बहुत से उपहार भेजे।

उस प्रान्त में यह रिवाज था कि दुल्हन की माँ लड़के के घर अपनी लड़की को लेकर जाती और वहाँ उसका विवाह करती। पर कावो चाहता था कि लोग आकर वाह वाह करें कि उसने अच्छा वर ढूँढ निकाला था, इसलिए उसने दामाद के पास खबर भेजी कि दुल्हा स्वयं आकर लड़की ले जाये। उसने अपने घर में एक दावत की भी व्यवस्था की।

"अब तो लगता है, जाकर रहना ही पड़ेगा।" येन ने कहा।

यू ने झट कहा-"पिछली बार चियेन को घर ले गया तो सब ने नज़रें गाड़ गाड़कर उसे देखा था। जब इस बार वे तुझे देखेंगे, तेरा गला घोंटेंगे, मेरा सिर काटेंगे। यही नहीं, शादी भी रोक दी जायेगी।"

"तुम्हारे कारण ही यह सब हुआ है। अगर में भी जाता तो वे शादी के लिए मान जाते। यह शादी होगी ही। उन्होंने हमारा दिया धन भी ले लिया है। साथ कुछ लोगों को ले जाऊँगा। अगर कुछ कहा तो उनकी हड्डी पसली एक करवा दूँगा।" येन ने गुस्से में कहा।

"अरे पगले! तेरे दस पाँच आदमी किस काम के? कावो ने आवाज़ लगाई तो द्वीप के सब लोग आकर जमा हो जायेंगे। तेरी मरम्मत करके भेज देंगे। यह समझ-बूझ से होनेवाला काम है, जोर जबर्दस्ती से नहीं।" यू ने कहा।

येन को फिर एक बार चियेन की मदद लेनी पड़ी। "अगले सप्ताह मेरी शादी है। मुझे लड़की के घर जाकर उसे लाना होगा। मेरे बदले



फिर तुम्हें जाना होगा।" येन ने कहा।

"पिछली बार कुछ और बात थी। इस बार मेरा जाना बिल्कुल ठीक नहीं है।" चियेन ने कहा।

"सच तो है। पर क्योंकि उन्होंने तुझे एक बार देख रखा है इसलिए वे तुम्हें ही दुल्हा समझेंगे। जब दुल्हन यहाँ आयेगी और विवाह की विधि पूरी हो जायेगी, तब कोई समस्या न रहेगी।" येन ने कहा।

चियेन को इस बार भी जाना पड़ा। उसने दूल्हे की पोषाक पहनी। बरात लेकर नावों में पश्चिमी द्वीप पहुँचा।

लड़की के घर उस दिन बड़ी दावत की व्यवस्था की गई। कई ने दुल्हे के बारे में कवितायें सुनाई। बरातियों का लड़की को साथ ले जाने का समय समीप आया। यू ने दुल्हन की तरफ के लोगों में उपहार बाँटे। नौकरों को ईनाम दिये।

वधू-वर जाने ही वाले थे कि इतने में नाववालों ने आकर कहा-"जाइये मत। बड़ा तूफ़ान आ रहा है।" बाजे गानों के शोर में किसी ने तूफान का शोर न सुना था। पर जब उनका शोर खतम हुआ तो मालूम हुआ कि तूफान उमड़ रहा था।

कावो ने अतिथियों को, जो जा रहे थे फिर अन्दर बुलाया।

अगले दिन सवेरे तूफ़ान का जोर बढ़ा। पाला भी गिरने लगा। उसी दिन मुहूर्त था। उस तूफ़ान में, पाले में झील पार करना असम्भव था। अगर यह मुहूर्त निकल गया तो दूल्हे को अकेले जाना पड़ेगा। यह अच्छा न होगा।

एक बूढ़े ने कावो से कहा-"क्यों यों घबराते हो? विवाह की विधि यहीं जो पूरी कर लो। कोई हानि न होगी।" और अतिथियों ने भी इसका समर्थन किया।



चियेन न सोच सका कि क्या करे। वह तभी उस चाल में काफी दूर फँस गया था। वह अपने "भाई" की मदद करने के लिए यह सब करने को मान गया था। उसका अपना कोई न था। अभी तक तो वह दुल्हा यूँही बना हुआ था, जब सचमुच बनना पड़ गया तो वह घबरा उठा। उसने यू से सलाह करती चाही, पर देखा कि वह खूब पी-पाकर नशे की नींद में नाक बजा रहा था।

चियेन ने लड़की के पिता से कहा- "जल्दबाजी न कीजिए। अब नहीं, कोई और मुहूर्त निश्चित कर लीजिये।"

कावो ने चकित होकर पूछा-"क्यों? अभी मुहूर्त तो नहीं गुज़रा है!" चियेन को न सूझा कि क्या कहे। विवाह का संस्कार और सहभोज आदि सब ठीक तरह सम्पन्न हुए। पति-पत्नी को कमरे में भेजा गया। चियेन ने दुल्हन की ओर देखा तक न। उससे कुछ कहा भी नहीं। वह एक कोने में पड़ा सो गया।

तीन दिन तक तूफान चलता रहा- फिर जाकर थमा। दुल्हिन के साथ उनका पति भी आया। सब नावों में दुल्हे के गाँव में पहुँचे।



चियेन पहले भागा भागा येन के पास गया और उसने उसको वह सब यह सुनाया, जो कुछ गुज़रा था। येन को जब मालूम हुआ कि उसने उसकी लड़की से विवाह कर लिया था तो उसने चियेन को खूब पीटा।

इतने में कावो ने आकर पूछा- "कौन हो तुम? मेरे दामाद को क्यों यों पीट रहे हो?" येन ने उसको सच सच बता दिया।

कावो को बहुत गुस्सा आया। उसने यू को खूब मारा। "चोर कहीं का! मुझे क्यों इतना धोखा दिया?"

फिर क्या था, येन के तरफ के लोगों में और कावो के तरफ के आदमियों में भिडन्त हो गई। इस समय न्यायाधिकारी पालकी में बैठकर उस तरफ जाता वहाँ रुका। "क्या झगड़ा हो रहा है यहाँ?" उसने पूछा। जब पूछताछ की गई तो मालूम हो गया कि असल में क्या बात थी। वह सब को न्यायस्थान पर ले गया। सुनवाई हुई। क्योंकि येन ने धोखा दिया था इसलिए उसको कोड़ों की सजा दी गई।

उसने चियेन को भी दोषी बताया। क्योंकि वह पहले ही येन से मार खा चुका था, इसलिए उसे अलग सजा न दी गई।

फिर न्यायाधिकारी ने कावो की लड़की और चियेन के विवाह को निश्चित करते हुए फैसला दिया।

कावो भी यही चाहता था। वह अपने दामाद को पश्चिमी द्वीप ले गया। वहीं उसे अपने घर में रख लिया। चियेन अपनी पत्नी के साथ सुख से रहने लगा।





पीपों में दूध पका माँस गाड़ियों में भरकर लाये।



और गाड़ी भर मांस मेरे एक कौर के लिए भी काफ़ी न था। मांस की कई सारी गाड़ियाँ मैं खा गया।



लबालब भरे दूध के पीपे मेरा मुख भी तर न कर सके। पर मैं पीते ही बेहोश सा हो गया, और नींद आने लगी।



मेरे हाथ में जो बाण घुस गये थे, उन्होंने उन्हें निकालकर तेल लगाया। रस्सियाँ भी काट डाली।



इन्जनीयर, बढ़ई पाँच सौ आदमियों ने मिलकर ८४ अंगुल लम्बी और ४८ अंगुल चौड़ी २४ चकवाले रथ का निर्माण किया। उन्होंने मेरे शरीर को जैसे तैसे उसमें लुढ़का दिया।



साढ़े चार अंगुलवाले डील-डौल १५०० घोड़ों को रथ में जोतकर, २६४० फीट दूरी पर स्थित नगरी के लिए निकले।



एक पड़ाव पर एक अजीब घटना हुई। तीन शरारती मेरे मुख पर भड़कर मेरी नाक में भाले घुमाने लगे।



मैं यकायक उठा। मैंने जो छींका तो ये तीनों धड़ाम से नीचे जा गिरे।





नगरी से बाहर-एक उजड़े मन्दिर के पास रथ रुका। वह राज्य में सब से बड़ा भवन था; जो आठ फुट ऊँचा था। मैं अङ्गड़ाई लेता जो उठा, तो मेरे पूरे शरीर को देखकर लिलिपुट डर से तितर-बितर होकर भाग गये। चारों ओर जो देखा, सारे राज्य में ऐसा लगा जैसे छोटे छोटे खिलौने जैसे घरोंदे रखे हुए हो।



मेरे बाएँ पैर में पतली जञ्जीरें डालकर उन्होंने मुझे मन्दिर के स्तम्भ से बाँध दिया। दो गज़ जगह मेरे लिए छोड़ गये थे।



मुझे देखने के लिए तभी लाखों लोग इकट्ठे हो गये। इस बीच सम्राट स्वयं देखने आया।



मैंने विनयपूर्वक अभिवादन किया। वे खुश हुए। जनता से कहा यदि मुझे किसी ने तङ्ग किया तो उसको कड़ी सजा दी जायेगी। मेरे खान -पान, नींद आदि के बारे में व्यवस्था करके वे चले गये। लिलिपुट भाषा सिखाने के लिए गुरु भी नियुक्त किया।



कुछ दिनों बाद दो राजप्रतिनिधि आए। उन्होंने मेरी जेब टटोलने के लिए अनुमति माँगी।



मैं इसके लिए मान गया। उनको सावधानी से अपने हाथों पर चढ़ाकर मैने जेबों में उतारा, उनकी रिपोर्ट यों थी-



पर्वतकाय के फोट के दाएँ जेब में एक खुरदरा कपड़ा है; जिसका क्षेत्रफल एक एकड़ है।



बाएँ जेब में एक बड़ी चान्दी को अलमारी है। बहुत मुश्किल से उसे खोलकर देखा।



उसमें घुटनों भर लाल नास था। जब उसकी गन्ध हमारी नाक में गई तो हम छींकते छींकते तङ्ग आ गये।



बगल की जेबों में दो लम्बे यन्त्र थे। लकड़ी और लोहे से बने उन यन्त्रों से वह क्या करेगा, हम नहीं जानते।



उसकी छातीवाले जेब से "ठिक ठिक" की ध्वनि इतनी तेज थी कि कान फूटते थे। उसने उसे बाहर निकालकर दिखाया।



उस महायन्त्र में दो बड़े बड़े शहतीर से धूम रहे हैं। बिना उनके देखे यह कोई काम नहीं करता।



वैरन्त्य नगर के राजा का नाम कुन्तिभोज था। उसकी दो बहने थीं, जिनका नाम था सुदर्शना और सुचेतना। उनमें से सुदर्शना काशी के राजा की पत्नी थी। और सुचेतना की सौवीर के राजा से शादी हुई थी।

सुदर्शना ने चाहा कि उसके एक ओजवान पुत्र हो। जिस तरह कुन्ती ने सूर्य से पुत्र पाया था, उसी तरह मन्त्रोच्चारण से अग्निदेव का साक्षात्कार करके उसने एक पुत्र प्राप्त किया। इसी समय सुचेतना के भी एक बच्चा हुआ। परन्तु वह मर गया। सुदर्शना को भय हुआ कि यदि उसके पति को यह मालूम हो गया, तो वह क्षमा न करेगा। इसलिए उसने अपने लड़के को अपनी बहन के पास भेज दिया। सौबीर का राजा न जानता था कि उसका एक लड़का पैदा होते ही मर गया था, और उसकी जगह एक और लड़का लाया गया था। सुचेतना ने उसका इस तरह पालन पोषण किया जैसे वह उसका अपना ही लड़का हो। उसका नाम उसने विष्णुसेन रखा।

विष्णुसेन छुटपन से ही अपने दैवीय गुण दिखाता आया था। सभी वह छोटा था कि उसने देखा कि एक राक्षस भेड़ के रूप में आकर बच्चों को तङ्ग किया करता था। उसने उसको मार दिया। यह देख सौवीर के लोगों ने उसका नाम अविमारक रखा। (अविमारक का अर्थ भेड़ को मारनेवाला है।)

एक दिन सौवीर का राजा शिकार खेलने गया। वहाँ जङ्गल में चण्डमारक मुनि का आश्रम था। उसने राजा से कहा-"मेरे शिष्य को शेर ने तङ्ग किया



हैं। आश्रमवासियों को जङ्गली जानवरों से रक्षा करने की जिम्मेवारी राजा पर है न? आप अपना कर्तव्य क्यों नहीं निभाते?"

राजा को भी गुस्सा आ गया। उसने मुनि से कहा-"तुम तो मुनि रूप में चाण्डाल मालूम होते हो। क्यों व्यर्थ मेरी निन्दा करते हो?"

मुनि क्रुद्ध हो उठा। उसने शाप दिया कि सौवीर का राजा उसकी पत्नी और लड़का चाण्डाल हो जायें। राजा भयभीत हो मुनि को पैरों पड़ा। मुनि ने शान्त होकर कहा कि उसके शाप का प्रभाव एक वर्ष तक ही रहेगा।

सौवीर का राजा अपने नगर वापस गया। अपना राज्य मन्त्रियों को सौंप कर अपनी पत्नी और लड़के के साथ चाण्डाल रूप में अज्ञातवास करने के लिए वैरन्त्य नगर पहुँचा। तब अविमारक की उम्र अट्ठारह वर्ष थी।

कुन्तिभोज की एक लड़की थी, जो अत्यन्त सुन्दर थी। उसका नाम कुरङ्गी था। क्योंकि वह सयानी हो चुकी थी इसलिए उसके विवाह के लिए सम्बन्ध खोजे जा रहे थे।

एक दिन कुरङ्गी कौचायन नामक मन्त्री के साथ राजोद्यान में गई। वह वहाँ खेल कूद कर जा रही थी कि अञ्जनवारी नामक मदोन्मत्त हाथी महावत को नीचे डालकर मारकर भीड़ की ओर भागा। लोग भागे। स्त्रियों ने हाहाकार किया। इतने में हाथी कुरङ्गी के वाहन की ओर दौड़ा। कुरङ्गी वाहन से नीचे कूद पड़ी।

इतने में अविमारक उस मदोन्मत्त हाथी के पास पहुँचा। उसे मारकर उसने उसका

ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। उस समय मन्त्री ने राजकुमारी को वाहन में बिठाकर महल में भिजवा दिया। जब उसने अविमारक के बारे में पूछताछ की तो मालूम हुआ कि वह चाण्डाल था।

जब यह घटना हुई तो कुरङ्गी और अविमारक ने एक दूसरे को देखा और दोनों आपस मे प्रेम करने लगे।

कुन्तिभोज तो उचित सम्बन्ध के विषय में चिन्तित था ही। पर वह यह भी चाहता था कि उसकी लड़की की शादी बहन के लड़के से हो जाये। अबिमारक की असली माँ काशी के राजा की पत्नी ने एक और पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम जयवर्मा था। काशी से स्वबर आई कि उसके साथ कुरङ्गी का विवाह किया जाय। कुरङ्गी को सुदर्शना के लड़के को देने की अपेक्षा, कुन्तीभोज ने सोचा; सुचेतना के लड़के को देना ही अच्छा था। क्योंकि सुचेतना का पति सौवीर का राजा, उसकी पत्नी को बड़ा भाई था। एक समय सौवीर के राजा ने उसके पास खबर भी भिजवाई थी



कि वह अपने लड़के अविमारक से कुरङ्गी से विवाह करायेगा। परन्तु तब कुन्तिभोज ने कहला भेजा था कि कुरङ्गी सयानी न हुई थी।

जब फिर सौवीर के राजा के यहाँ से खबर न मिली तो कुन्तीभोज ने आदमी भेजे। तब मालूम हुआ कि सौवीर का राजा और उसका कुटुम्ब कहीं चला गया था।

कुरङ्गी ने भी अपनी दासी और सहेली को बुलाकर अपने प्रेम के बारे में बताया। उसने उनसे कहा कि वे मालूम करें कि वह युवक कौन था, जिसने उसकी हाथी से रक्षा की थी।

वे अविमारक को ढूँढ़ते हुए गये। उससे कहा कि रात के समय वह कुरङ्गी के महल में आये।

अविमारक का सन्तुष्ट नाम का एक ब्राह्मण साथी था। वह अविमारक को न छोड़ सका। वह भी वैरन्त्य नगर में रह रहा था और जैसे तैसे बिना किसी को दीखे अविमारक के घर हो आया करता था। अविमारक ने उससे कहा कि वह लुका छुपा कुरङ्गी को देखने जा रहा था।

उस दिन आधी रात को अविमारक एक रस्सी, तलवार लेकर चोर के भेस में राजमहल में घुसा, कुरङ्गी की सहेलियों की मदद से वह अपनी प्रेयसी कुरङ्गी से मिला। उन दोनों का गान्धर्व विवाह हो गया।

एक बार जब अविमारक राजमहल में था तो राजा को पता लगा कि कुरङ्गी के कमरे में कोई था। अविमारक जैसे तैसे बचकर बाहर चला गया। उसके बाद राजाने अपनी लड़की पर सख्त पहरा लगाया। कुरङ्गी के दुःख की कोई सीमा न रही।

कुरङ्गी से दूर अविमारक रह न पाता था। इसलिए अग्नि में कूदकर उसने आत्महत्या करनी चाही। क्योंकि अग्निदेवता



उसका पिता था, इसलिए उसका कुछ न हुआ। पहाड़ पर से कूदकर मर जाने के लिए वह पहाड़ पर चढ़ा। सौभाग्य से उसी समय एक विद्याधर, अपनी पत्नी के साथ आकाश मार्ग से जाता उस पहाड़ पर उतरा। उन्होंने अविमारक को आत्महत्या करने से रोका। उसकी सारी कहानी सुनी। विद्याधर ने उसको अपनी अंगूठी देते हुए कहा-"यह महिमावाली अंगूठी है। जो इसे दायें हाथ की अंगुली में पहनते हैं, वे अदृश्य रहते हैं। अगर इसे बाई हाथ में पहन लिया जाय तो ये दृश्य हो जाते हैं। इसकी सहायता से तुम अदृश्य होकर अपनी प्रेयसी के पास जा सकते हो।"

"इसकी सहायता से मैं दिन दहाड़े ही कुरङ्गी के पास जा सकता हूँ।" अविमारक ने सोचा। जब अंगूठी को दायें हाथ की अंगुली में पहनकर कुरङ्गी के निवास स्थल पर पहुँचा तो उसने देखा कि गले में कपड़ा बाँधकर वह भी आत्महत्या करने का प्रयत्न कर रही थी। अविमारक जब यकायक उसके समक्ष प्रत्यक्ष हुआ तो उसके आनन्द की सीमा न रही।



काशीराजा का पुत्र जयवर्मा कुरङ्गी से विवाह करने के लिए वैरन्त्य नगर आया। परन्तु कुरङ्गी की माँ ने कहा जबतक उसके भाई के लड़के, विष्णुसेन (अविमारक) का कुछ पता न लगेगा, तबतक वह कुरङ्गी का जयवर्मा के साथ विवाह न करेगी।

इसी समय शाप विमुक्त हो सौवीर का राजा कुन्तीभोज के पास आया। उसको दुखित देखकर कुन्तीभोज ने दुःख का कारण पूछा। सौवीर के राजा ने कहा कि उसका लड़का कुछ दिनों से नहीं दिखाई दे रहा था।

इतने में वहाँ नारद महर्षि आया। कुन्तिभोज ने नारदमहर्षि का स्वागत किया। "महात्मा! सौवीर के राजा का लड़का जीवित है न? वह क्यों नहीं दिखाई देता है?"

"वह इस समय विवाह के उत्साह में है।" नारद ने कहा।

"क्या उसका विवाह हो गया है? कहो, किसकी लड़की से विवाह हुआ है?" कुन्तिभोज ने पूछा।

"वैरन्त्य नगर में कुन्तिभोज की लड़की के साथ उसने विवाह कर लिया है।" नारद ने कहा। जब वस्तुस्थिति मालूम हो गई तो कुन्तिभोज ने अविमारक और कुरङ्गी का शास्त्रोक्त विधि से विवाह करने का निश्चय किया। पर उसे न सूझा कि वह अपनी बहन सुदर्शना से क्या कहे।

नारद ने सुदर्शना को अलग बुलाकर कहा-"अविमारक तुम्हारा ही लड़का तो है। जयवर्मा और कुरङ्गी की उम्र भी नहीं मिलती है। इसलिये अपने पति से कहो कि वह कुरङ्गी की बहन सुमित्रा से शादी करे।"

इसके बाद कुरङ्गी और अविमारक का यथाविधि विवाह हुआ। उनके कष्ट भी दूर हो गये।





मार्कोपोलो की साहसिक यात्रायें